BAMV-101

संगीत परिचय

बी0ए0 संगीत(गायन) – प्रथम वर्ष

संगीत विभाग – मानविकी विद्याशाखा

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

BAMV-101

संगीत परिचय

बी0ए0 संगीत(गायन) – प्रथम वर्ष

संगीत विभाग – मानविकी विद्याशाखा

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
तीनपानी बाईपास रोड, ट्रान्सपोर्ट नगर के पीछे,
हल्द्वानी – 263139
फोन नं0 : 05946–286000/01/02
फैक्स नं0 : 05946–264232,
टोल फ्री नं0 : 18001804025
ई–मेल : **info@uou.ac.in** वेबसाईट : **www.uou.ac.in**

विशेषज्ञ समिति

प्रो0 अजय रावत
निदेशक–मानविकी विद्याशाखा,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

डॉ0 गीता जोशी
प्रधानाध्यापिका,
महिला महाविद्यालय,
सतीकुण्ड, हरिद्वार

डॉ0 विजय कृष्ण
वरि0 अकादमिक परामर्शदाता,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

प्रो0 सुनील कुमार
निदेशक,
स्कूल ऑफ परफार्मिंग आर्टस,
इग्नू, नई दिल्ली

डॉ0 रेखा शाह(आ.स.)
विभागाध्यक्षा, संगीत विभाग,
डी0एस0बी0 कैम्पस, नैनीताल

द्विजेश उपाध्याय
अकादमिक परामर्शदाता,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

डॉ0 आशा पाण्डे कृष्ण
विभागाध्यक्षा, संगीत विभाग,
एच0एन0बी0 गढ़वाल यूनिवर्सिटी,
श्रीनगर

डॉ0 चन्द्रशेखर तिवारी(आ.स.)
वरिष्ठ संगीतज्ञ,
हल्द्वानी, नैनीताल

पाठ्यक्रम संयोजन

डॉ0 विजय कृष्ण
वरि0 अकादमिक परामर्शदाता,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

द्विजेश उपाध्याय
अकादमिक परामर्शदाता,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

पाठ्यक्रम संपादन

डॉ0 विजय कृष्ण
वरि0 अकादमिक परामर्शदाता,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

डॉ0 चन्द्रशेखर तिवारी
वरिष्ठ संगीतज्ञ,
हल्द्वानी, नैनीताल

डॉ0 रेखा शाह
विभागाध्यक्षा, संगीत विभाग,
डी0एस0बी0 कैम्पस, नैनीताल

द्विजेश उपाध्याय
अकादमिक परामर्शदाता,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

इकाई लेखन

1.	**डॉ0 विजय कृष्ण**	प्रथम खण्ड़ – इकाई 1
2.	**डॉ0 निर्मला जोशी**	प्रथम खण्ड़ – इकाई 2 व 3 द्वितीय खण्ड़ – इकाई 2 व 3 तृतीय खण्ड़ – इकाई 3
3.	**डॉ0 महेश पाण्डे**	द्वितीय खण्ड़ – इकाई 1 तृतीय खण्ड़ – इकाई 1 व 2

कापीराइट : @उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय
संस्करण : सीमित वितरण हेतु पूर्व प्रकाशन प्रति
प्रकाशन वर्ष : जुलाई 2013, पुनर्प्रकाशन–जुलाई 2016
प्रकाशक : निदेशालय, अध्ययन एवं प्रकाशन
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी, नैनीताल–263139
ई–मेल : books@uou.ac.in
इस सामग्री के किसी भी अंश को उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में अथवा मिमियोग्राफी चक्रमुद्रण द्वारा या अन्यत्र पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

बी0ए0 संगीत (गायन) – प्रथम वर्ष
संगीत परिचय – बी0ए0एम0वी0–101

खण्ड 1 – भारतीय संगीत व भारतीय संगीत शब्दावली

इकाई 1 – संगीत एक परिचय। **पृष्ठ 1–10**

इकाई 2 – भारतीय संगीत का संक्षिप्त इतिहास। **पृष्ठ 11–19**

इकाई 3 – परिभाषा (स्वर, श्रुति, आलाप, राग, सप्तक, ताल, लय, आवर्तन, ताली, खाली, विभाग व ठेका)। **पृष्ठ 20–27**

खण्ड 2 – ख्याल, तानपुरे का ज्ञान एवं जीवन परिचय

इकाई 1 – ख्याल की उत्पत्ति, विकास एवं घरानों का संक्षिप्त परिचय; तानपुरे की संरचना एवं मिलाने की विधि। **पृष्ठ 28–40**

इकाई 2 – संगीतज्ञों(पं0 वी0एन0 भातखण्डे, पं0 वी0डी0 पलुस्कर व सदारंग–अदारंग) का जीवन परिचय। **पृष्ठ 41–46**

इकाई 3 – संगीतज्ञों(पं0 ओमकारनाथ ठाकुर, उ0 फैयाज खां व पं0 भीमसेन जोशी) का जीवन परिचय। **पृष्ठ 47–52**

खण्ड 3 – स्वरलिपि पद्धति, तालिपि पद्धति एवं गायन शैलियाँ

इकाई 1 – भातखण्डे स्वरलिपि पद्धति का परिचय; राग यमन परिचय एवं ख्याल (विलम्बित व मध्यलय) बन्दिशों को लिपिबद्ध करना; राग भैरव व बिलावल का परिचय एवं मध्यलय ख्याल को लिपिबद्ध करना; पाठयक्रम के रागों में ध्रुवपद दुगुन सहित। **पृष्ठ 53–66**

इकाई 2 – भातखण्डे तालिपि पद्धति का परिचय तथा पाठ्यक्रम की तालों को लयकारी (दुगुन व चौगुन) सहित लिपिबद्ध करना। **पृष्ठ 67–80**

इकाई 3 – गायन शैलियों(ध्रुवपद, धमार, ठुमरी, टप्पा, दादरा व होरी) का संक्षिप्त परिचय। **पृष्ठ 81–92**

इकाई 1 – संगीत एक परिचय

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 संगीत की उत्पत्ति
1.4 संगीत के तत्व
1.4.1 स्वर 1.4.2 लय
1.5 संगीत की विधाऐं
1.5.1 शास्त्रीय संगीत 1.5.2 उपशास्त्रीय संगीत
1.5.3 सुगम संगीत 1.5.4 लोक संगीत
1.6 संगीत के अंग
1.6.1 गायन
1.6.1.1 ख्याल 1.6.1.2 ध्रुवपद
1.6.1.3 ठुमरी, दादरा, कजरी, चैती व होली
1.6.2 वादन
1.6.2.1 तत वाद्य 1.6.2.2 सुषिर वाद्य
1.6.2.3 अवनद्ध वाद्य 1.6.2.4 घन वाद्य
1.6.3 नृत्य
1.7 संगीत की उपयोगिता
1.8 सारांश
1.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
1.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
1.11 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0 संगीत के पाठ्यक्रम (बी0ए0एम0वी0–101) के प्रथम खण्ड की पहली इकाई है। पहले शायद आपने संगीत के बारे में सुना होगा या आप संगीत को समझते होंगे। दूसरे शब्दों में कहे तो आप किसी ना किसी रुप में संगीत से जुड़े होंगे।

प्रस्तुत इकाई के माध्यम से आप संगीत के बारे में जानेंगे। इस इकाई में संगीत के विभिन्न पहलुओं, जैसे – संगीत की उत्पत्ति, संगीत के तत्व, संगीत की विधाएं, संगीत के अंग व संगीत की उपयोगिता के बारे में बताया गया है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप यह जान पाऐंगे कि संगीत किसे कहते हैं? आप संगीत के अव्यवों का ज्ञान लेकर अपने संगीत पथ में आगे बढ़ सकेंगे तथा यह ज्ञान आपके इस कार्य में सहायक सिद्ध होगा। भविष्य में आपको संगीत की विधा एवं अंगों का अपनी रुचि के अनुसार चयन करने में सुविधा होगी।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप :–

- संगीत के विभिन्न पहलुओं से परिचित हो पाऐंगे।
- भारतीय संगीत के प्रति आकर्षित होकर दूसरों को भी संगीत सीखने के लिए प्रेरित कर सकेंगे।
- अपनी रुचि के अनुसार, अपने भविष्य हेतु संगीत के अंग एवं विधा का आसानी से चयन कर सकेंगे।

1.3 संगीत की उत्पत्ति

प्राचीन ग्रन्थों में संगीत को गायन, वादन एवं नृत्य का समग्र रूप माना है, जो कि शारंगदेव के संगीत रत्नाकर ग्रन्थ में दिए गए श्लोक से स्पष्ट है :

"गीतं वाद्यं नृत्यं च त्रयं संगीत मुच्यते"।

वैसे गायन, वादन एवं नृत्य का एक दूसरे से स्वतंत्र अस्तित्व है। परन्तु गायन के साथ स्वरवाद्य जैसे सारंगी अथवा वायलिन एवं अवनद्ध वाद्य – तबला अथवा पखावज संगति के रूप में प्रयोग होता है। प्राचीन समय में इन तीनों का प्रदर्शन एक साथ किया जाता था। नृत्य, गायन, स्वर वाद्य वादन एवं अवनद्ध वाद्य वादन पर आधारित था, परन्तु अब इन तीनों का स्वतंत्र अस्तित्व स्थापित हो चुका है। सामान्यतः संगीत को शास्त्रीय संगीत ही समझा जाता है परन्तु संगीत के अन्तर्गत संगीत की सभी विधाएं – शास्त्रीय संगीत, उपशास्त्रीय संगीत, सुगम संगीत एवं लोक संगीत आती है जिनकी चर्चा संगीत की विधायें, के अन्तर्गत की जाएगी।

भारतीय परम्परा एवं मान्यता के अनुसार संगीत की उत्पत्ति वेदों के निर्माता ब्रह्मा से मानी गई है। ब्रह्मा द्वारा भगवान शंकर को यह कला प्राप्त हुई। भगवान शंकर अथवा शिव ने इसको देवी सरस्वती को दिया, जो ज्ञान एवं कला की अधिष्ठात्री देवी कहलाई। मूर्तियों एवं चित्रों में भी देवी सरस्वती को आपने वीणा एवं पुस्तक के साथ देखा होगा। नारद ने संगीत कला का ज्ञान देवी सरस्वती से प्राप्त कर स्वर्ग में गंधर्व, किन्नर एवं अप्सराओं को इसकी शिक्षा प्रदान की। यहीं से इस कला का प्रचार पृथ्वी लोक पर ऋषियों द्वारा किया गया।

आदि काल में मानव हर्ष एवं उल्लास की अभिव्यक्ति, नृत्य एवं विभिन्न प्रकार की ध्वनियों को आवाज के माध्यम से निकाल कर करता था। मानव के विकास एवं सभ्यता के विकास के साथ इन ध्वनियों की पहचान, संगीत के लिए की गई जिनके विभिन्न प्रयोग के द्वारा संगीत की रचना की जाने लगी।

जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है कि संगीत की उत्पत्ति वेदों के निर्माता ब्रह्मा से मानी गई है। अतः यह कहा जा सकता है कि संगीत का जन्म वैदिक युग में हुआ और इसका व्यवस्थित स्वरूप में विकास भी इसी काल में हुआ। सामवेद की ऋचाओं के गान को सामगान कहा गया। वैदिक ऋचाओं का गान ऋषियों द्वारा किया गया और यहीं से संगीत की विकास यात्रा आरम्भ हुई, जिसका पूर्ण परिचय आप आगे चलकर संगीत का इतिहास, के अध्ययन से प्राप्त करेंगे।

1.4 संगीत के तत्व

स्वर एवं लय संगीत के मूल तत्व हैं। स्वर एवं लय के सुन्दर संयोजन को ही संगीत कहते हैं। विभिन्न स्वर समूहों के विभिन्न लय के प्रयोग से संगीत की रचना होती है। संगीत को समझने के लिए स्वर एवं लय को समझना आवश्यक है। स्वर, ध्वनि से प्राप्त होता है एवं लय पूरी सृष्टि में विद्यमान है। अतः स्वर एवं लय दोनों प्रकृति में विद्यमान हैं। विद्वानों द्वारा प्रकृति से स्वर एवं लय को पहचान कर संगीत की रचना की गई। आइए अब स्वर और लय को समझें :

1.4.1 स्वर – फारसी के विद्वान के अनुसार हजरत मूसा जब पहाड़ों पर प्रकति का आनन्द ले रहे थे, उस समय आकाशवाणी हुई कि अपना असा (फकीरो का डंडा) पत्थर पर मार। पत्थर पर चोट से पत्थर के सात टुकड़े हुए और हर पत्थर से पानी की धारा निकली जिससे सात प्रकार की आवाजें निकली एवं इसके आधार पर हजरत मूसा ने सात स्वरों की रचना की। एक अन्य मत के अनुसार पहाड़ों पर एक मूसीकार नाम का पक्षी होता है जिसकी चोंच में सात सुराख होते हैं। इन्हीं सात सुराखों से निकलने वाली ध्वनि से सात स्वर स्थापित हुए।

संगीत दर्पण के लेखक दामोदर पंडित के अनुसार सात स्वरों की उत्पत्ति पशु–पक्षियों की आवाजों से निम्न प्रकार मानी गई हैः–

मोर – **'सा'** अथवा *षडज*
चातक – **'रे'** अथवा *ऋषभ*
बकरा – **'ग'** अथवा *गन्धार*
कौआ – **'म'** अथवा *मध्यम*
कोयल – **'प'** अथवा *पंचम*
मेढक – **'ध'** अथवा *धैवत*
हाथी – **'नी'** अथवा *निषाद*

उपरोक्त मान्यताओं का कोई ठोस ऐतिहासिक एवं वैज्ञानिक सन्दर्भ प्राप्त नहीं होता, परन्तु यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि प्रकृति में व्याप्त ध्वनियों से ही स्वर स्थापित किए गए चाहे वो जल धाराएं हो, नदियों की कल–कल ध्वनियॉ हो अथवा प्रकृति में उपस्थित पशु–पक्षियों की आवाजें।

स्वर, ध्वनि का वह स्वरूप है जिसमें नियमित कंपन होता है। स्वर, कर्णप्रिय अथवा कानों को अच्छा लगता है एवं इसको ही हम संगीत हेतु प्रयोग करते हैं। स्वर को अन्य शब्दों में सांगीतिक ध्वनि भी कह सकते हैं। इसके विपरीत यदि ध्वनि में कंपन अनियमित होते हैं तो यह ध्वनि कर्ण कटु अथवा कानों को अच्छी नहीं लगती है, जिसे हम शोर कहते हैं। इस प्रकार की ध्वनि को असांगीतिक ध्वनि कहते हैं एवं इस प्रकार की ध्वनि को संगीत में प्रयोग नहीं किया जाता है।

स्वर के बाद में विद्वानों द्वारा सात स्वर जिसको सप्तक कहा गया एवं एक सप्तक में बाद में कोमल एवं तीव्र स्वरों की पहचान कर बारह स्वर भी स्थापित किए गए। इसी सप्तक में बाईस श्रुतियॉ भी स्थापित की गई। श्रुति, स्वर का वह सूक्ष्म रूप है जो कि एक दूसरे को सुनकर अलग से पहचाना जा सकता है। शास्त्रीय संगीत के रागों में इन्हीं श्रुतियों का प्रयोग किया जाता है।

1.4.2 लय – लय पूरे बृह्मांड में विद्यमान है। *समय की समान गति को लय कहते हैं।* हर साठ सैकेंड का एक मिनट, हर साठ मिनट का एक घंटा, चौबीस घंटों का एक दिन, 30/31 दिनों का एक महीना व बारह महीनों का एक वर्ष, ये सब निश्चित अन्तराल, जीवन शैली को संचालित करते हैं। हृदय का स्पन्दन व नाड़ी का स्पन्दन भी समान अन्तराल से होता है जिससे जीवन चलता है। इस अन्तराल में व्यवधान अथवा अनियमित्ता आने पर जीवन के संचालन में बाधा उत्पन्न होने लगती है। *यही नियमित अन्तराल ही लय कहलाता है।* स्वर का आधार भी लय ही है क्योंकि *नियमित कम्पन्न संख्या की ध्वनि को स्वर कहा गया है।* सृष्टि का संचालन लय पर आधारित है। संगीत में लय के तीन प्रकार – विलम्बित, मध्य एवं द्रुत माने गए हैं।

विलम्बित लय, वह लय है जिसमें अन्तराल का समय लम्बा होता है, यही अन्तराल का समय दुगुना होने पर मध्यलय एवं मध्यलय का अन्तराल दुगुना होने पर द्रुत लय हो जाती है। मध्यलय स्वाभाविक लय है। हम अपनी स्वाभाविक चाल को मध्यलय कह सकते हैं। उससे आहिस्ता अथवा तेज गति में चलना किसी विशेष कारण से ही होता है। यदि मध्यलय के अन्तराल का समय एक सैकेंड माना जाए तो इस प्रकार दो सैकेंड का अन्तराल विलम्बित एवं आधा सैकेंड का अन्तराल द्रुत लय कहलाएगी।

1.5 संगीत की विधाऐं

संगीत की चार विधाओं – शास्त्रीय संगीत, उपशास्त्रीय संगीत, सुगम संगीत एवं लोक संगीत की व्याख्या इस खण्ड में की जाएगी।

1.5.1 शास्त्रीय संगीत – ऐसा संगीत जिसका शास्त्र निश्चित है अर्थात शास्त्र पर आधारित वह संगीत जिसमें राग व लय–ताल शास्त्र के नियमों के आधार पर स्वर एवं लय का सुन्दर संयोजन कर राग को गाया अथवा वाद्यों पर प्रस्तुत किया जाता है, शास्त्रीय संगीत कहलाता है।

गायन

वादन

नृत्य

इसमें रागों के नियमों का पालन करना आवश्यक है तथा रंजकता हेतु नियमों को शिथिल करने का अधिकार नहीं होता है। ये नियम स्थिर होते हैं एवं किसी भी प्रदेश या देश में शास्त्रीय संगीत का प्रयोग समान होता है। उदाहरण के लिए जैसे यदि राग यमन का प्रयोग विलम्बित लय की एकताल में किया जा रहा है तो चाहे देश का कोई भी भाग हो, राग यमन के निश्चित नियम, एकताल की बारहमात्रा एवं ताल को प्रदर्शित करने वाले तबले के निश्चित बोल ही प्रयोग में लाए जाऐंगे एवं इसी प्रकार बाहर के देशों में जैसे– अफगानिस्तान, पाकिस्तान, बांगलादेश आदि में भी शास्त्रीय संगीत का प्रयोग, नियमों के आधार पर ही किया जाएगा। पश्चिमी देशों में तो संगीत की शिक्षा भारतीय संगीत शिक्षकों द्वारा ही दी जाती है। भारत में संगीत की दो शैलीयॉ प्रचलित हैं – उत्तर भारतीय संगीत एवं दक्षिण भारतीय संगीत। इन दोनों शैलियों का शास्त्र भिन्न है एवं ये दोनों अपने शास्त्र पर आधारित है। स्वर एक होने के बावजूद भी दोनों शैलियों में रागों के नामकरण पृथक है, राग प्रस्तुतिकरण का ढंग अलग है एवं ताल शास्त्र के नियम भी पृथक ही हैं। उत्तर भारतीय शास्त्रीय संगीत की शैलियों की व्याख्या 'संगीत के अंग' भाग के अन्तर्गत की जाएगी।

1.5.2 उपशास्त्रीय संगीत – जैसा की नाम से ही पता चल रहा है कि इस संगीत में पूर्ण शास्त्र का प्रयोग नहीं है। संगीत का आधार तो शास्त्र है परन्तु इसमें राग शास्त्र के नियमों का कठोरता से पालन करने की आवश्यकता नहीं है। इसमें राग के नियमों को भाव, रस एवं माधुर्य हेतु शिथिल किया जा सकता है। उदाहरण के लिए जैसे उपशास्त्रीय संगीत की रचना यदि पीलू अथवा काफी राग पर आधारित कर प्रयोग की जा रही है तो इसमें रजंकता हेतु इन रागों में प्रयोग होने वाले स्वरों के अतिरिक्त भी स्वर प्रयोग किए जा सकते हैं। इस प्रकार का यह मिश्र स्वरूप, मिश्र पीलू अथवा मिश्र काफी कह कर पुकारा जाता है। उपशास्त्रीय संगीत के अन्तर्गत आने वाली शैली ठुमरी, दादरा, कजरी, चैती एवं होली का परिचय आप *'संगीत के अंग'* के अन्तर्गत प्राप्त करेंगे। उपशास्त्रीय संगीत हेतु मुख्यतः राग पीलू, काफी, देश, खमाज, पहाड़ी, तिलंग, भैरवी आदि रागों का प्रयोग किया जाता है।

ठुमरी

होली

कजरी

1.5.3 सुगम संगीत – यह संगीत पूर्णतया भाव प्रधान है। इसमें हिन्दी के कवियों एवं उर्दू के शायरों द्वारा रचित रचनाओं को स्वर–लय में बांधकर गाया जाता है। गीत, भजन एवं गजल, सुगम संगीत की श्रेणी में आते हैं। संगीत, भक्ति का माध्यम रहा है अतः मुस्लिम धर्म की नात–कव्वाली एवं हिन्दू धर्म की कीर्तन गायन शैली भी सुगम संगीत की श्रेणी में ही आऐंगे।

गजल गीत भजन

1.5.4 लोक संगीत – ग्रामीण परिवेश में, लोक संगीत उन्मुक्त वातावरण में जन्म लेता है। लोक संगीत में मुख्यतया नृत्य एवं गाना–बजाना साथ–साथ होता है। लोक संगीत से प्रदेश विशेष की प्राकृतिक, सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियों का परिचय प्राप्त होता है एवं गीतों का विषय भी इन्हीं पर आधारित होता है। लोक संगीत की धुनों ने शास्त्रीय संगीत एवं उपशास्त्रीय संगीत को प्रभावित किया है। पहाड़ की धुन पर आधारित पहाड़ी राग एवं राजस्थान क्षेत्र का मांड इसके उदाहरण हैं।

कुमाऊँनी गढ़वाली राजस्थानी

1.6 संगीत के अंग

संगीत शब्द सम्यक एवं गीत से मिलकर बना है। सम्यक+गीत = संगीत। सम्यक का अर्थ है भलीभांति एवं गीत का अर्थ है गाना अर्थात भलीभांति गाना संगीत है। जैसा की प्रस्तावना में बताया जा चुका है कि संगीत के अन्तर्गत गायन, वादन एवं नृत्य तीनों आते हैं एवं यही संगीत के अंग हैं। इस भाग में आप तीनों के विषय में अलग–अलग परिचय प्राप्त करेंगे।

भारतीय शास्त्रीय संगीत(गायन, वादन व नृत्य) के शीर्ष कलाकार

1.6.1 गायन – गायन को कंठ संगीत भी कहा जाता है, अर्थात कंठ के द्वारा संगीत उत्पन्न करना। गायन, स्वर, लय एवं पद्य के संयोग से बनता है। पद्य अथवा काव्य का गायन में मुख्य स्थान है। गायन की शैली के अनुसार पद्य अथवा काव्य का चयन किया जाता है। शास्त्रीय गायन विद्या के अन्तर्गत ख्याल एवं ध्रुपद गायन शैली आती है। शास्त्रीय गायन की इन दोनों शैलीयों का वर्णन प्रस्तुत है।

1.6.1.1 ख्याल – ख्याल का अर्थ है कल्पना अतः इसमें राग के नियमों के अन्तर्गत विभिन्न स्वर समूहों की लय व ताल के साथ कल्पना कर, राग का स्वरूप स्थापित किया जाता है। ख्याल गायन में विलम्बित, मध्य एवं द्रुत लय की रचनाऐं गाई जाती हैं। इसमें आलाप – 'अकार' अर्थात 'अ', 'आकार' अर्थात 'आ', 'उकार' अर्थात 'उ' एवं 'इकार' अर्थात 'इ' वर्णों के माध्यम से किया जाता है। राग के भाव व रस के आधार पर पद्य का चयन कर रचनाऐं गाई जाती हैं जिसका अलंकरण आलाप, बोल आलाप, बोल तान, सरगम एवं तानों के प्रयोग से किया जाता है। इन सबका अध्ययन आप आगे की इकाईयों में करेंगे। विलम्बित लय की रचना अथवा बन्दिश को बड़ा ख्याल कहा जाता है। बड़े ख्याल हेतु एकताल, तिलवाड़ा, झूमरा आदि तालों का प्रयोग किया जाता है। मध्य व द्रुत लय की रचना अथवा बन्दिश को छोटा ख्याल कहा जाता है। मध्य लय एवं द्रुत लय की रचना – तीनताल, एकताल, आड़ाचारताल आदि तालों में की जाती है। अति द्रुत लय में 'तराना' गाया जाता है। अति द्रत लय में चूंकि शब्दों का उच्चारण शुद्ध नहीं रखा जा सकता है अतः इसमें निरर्थक शब्द जैसे दानी–तानी, दीम, तन, तनन, देरे, ना द्रीतोम आदि शब्दों का प्रयोग किया जाता है। बड़े एवं छोटे ख्याल के बाद ही तराना गाने की परम्परा है क्योंकि लय शास्त्र के नियमानुसार क्रमशः विलम्बित, मध्य एवं द्रुत लय का प्रयोग किया जाता है। यह कोमल एवं मधुर गायन शैली है। इसमें लय–ताल हेतु अवनद्ध वाद्य तबले का प्रयोग किया जाता है।

अब्दुल करीम खॉ
किराना घराना

उस्ताद अल्लादिया खॉ
जयपुर घराना

उस्ताद अमीर खॉ
इन्दौर घराना

उ0 बड़े गुलाम अली
पटियाला घराना

पं0 भीमसेन जोशी
किराना घराना

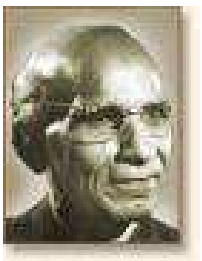
उस्ताद चॉद खॉ
दिल्ली घराना

पं0 डी0वी0 पलुस्कर
ग्वालियर घराना

उस्ताद फैयाज खॉ
आगरा घराना

उ0 मुस्ताक हुसैन खॉ
रामपुर घराना

उ0 वाहिद हुसैन
खुर्जा घराना

1.6.1.2 ध्रुवपद – ध्रुवपद गायन शैली ख्याल से प्राचीन है। ध्रुवपद के बाद ही ख्याल का जन्म हुआ। यह गायन शैली जोरदार एवं गंभीर है। पखावज वाद्य की ध्वनि तबले की अपेक्षा गंभीर होती है इसीलिए ध्रुवपद गायन हेतु पखावज की संगति की जाती है। ध्रुवपद की रचना पखावज पर बजने वाली तालों जैसे चारताल, सूलताल, धमार, तीवरा आदि में की जाती है। इसमें सरगम एवं तानों का प्रयोग नहीं किया जाता है बल्कि इसके स्थान पर दुगुन, तिगुन, चौगुन एवं कठिन लयकारी का प्रयोग कलाकार की सामर्थ के अनुसार किया जाता है। लयकारी का अध्ययन आप आगे करेंगे। इस गायन शैली में ताल के साथ रचना प्रस्तुत करने से पहले नोम–तोम शब्दों के माध्यम से विलम्बित, मध्य एवं द्रुत लय में आलाप प्रस्तुत किया जाता है।

पं0 सियाराम तिवारी

गुन्डेचा ब्रदर्स

उ0 वसीफुद्दीन डागर

1.6.1.3 ठुमरी, दादरा, कजरी, चैती एवं होली – उपशास्त्रीय गायन की विधा की इन शैलियों का प्रमुख उद्देश्य शब्दों के भावों को स्वर एवं लय के विभिन्न प्रयोगों द्वारा प्रकट करना है। ठुमरी विलम्बित लय में एवं दादरा मध्य लय में गाया जाता है। ठुमरी के बाद ही दादरा गाने की परम्परा है। ठुमरी एवं दादरा वियोग एवं श्रृंगार रस लिए हुए होता है। ठुमरी हेतु दीपचन्दी, जत, पंजाबी आदि तालों का प्रयोग किया जाता है एवं दादरा हेतु कहरवा एवं दादरा ताल प्रयोग की जाती है। दादरा एक ताल का नाम भी है।

कजरी एवं चैती, लोक शैली की विधा है जिसको परिष्कृत कर दादरा की भांति गाया जाता है। कजरी वर्षा ऋतु में एवं चैती, पूर्वी अचंल में चैत्र माह में गाई जाती है। होली गायन फाल्गुन माह में होली पर्व के अवसर पर गाया जाता है एवं इसका गायन ठुमरी की भांति किया जाता है। गायन के विद्यार्थी इन सबका विस्तृत अध्ययन आगे चलकर करेंगे।

1.6.2 वादन – भारतीय वाद्यों को प्राचीन ग्रन्थों, भरत के नाट्यशास्त्र एवं शारंगदेव के संगीत रत्नाकर आदि में चार श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया है।

1. तत वाद्य **2.** सुषिर वाद्य **3.** अवनद्ध वाद्य **4.** घन वाद्य

1.6.2.1 तत वाद्य – इस श्रेणी के वाद्यों में तारों के द्वारा स्वर उत्पन्न किए जाते हैं। जैसे वीणा, सितार, सरोद एवं तानपुरा। वीणा एवं सितार में धातु(पीतल) की वस्तु को अंगुली में पहनकर तारों पर आघात कर स्वर उत्पन्न किये जाते हैं, इसको मिजराब कहा जाता है। सरोद वाद्य को, नारियल के ऊपर के कठोर भाग के टुकड़े(जवा) के द्वारा बजाया जाता है। तानुपरा को केवल अंगुली से बजाया जाता है। तत वाद्य के अन्तर्गत ऐसे वाद्य भी आते हैं जिनमें तारों पर स्वर, गज (धनुष की आकार जिसमें डोरी के स्थान पर घोड़े की पूंछ के बाल होते हैं) के आघात अथवा घिस कर निकाले जाते हैं। इनको वित्त वाद्य भी कहते हैं, जैसे सारंगी, वायलिन, इसराज आदि। तत वाद्य की श्रेणी में वे सब वाद्य आते हैं जिनमें तार होते हैं। तत वाद्यों पर विलम्बित एवं मध्य लय की रचना प्रस्तुत की जाती है। तत वाद्यों हेतु मसीत खां द्वारा मिजराब अथवा जवा के बोलों से तीनताल की विलम्बित लय हेतु मसीतखानी गत एवं इसी प्रकार मध्यलय हेतु रजा खां द्वारा रजाखानी गत की रचना की गई। इन गतों की वादन शैली को तंत्र वादन शैली कहा जाता है। तत वाद्य के अन्तिम एवं प्रथम तार पर मिजराब एवं जवा के द्वारा अति द्रुत लय में झाला बजाया जाता है। मसीतखानी एवं रजाखानी गतों से पूर्व इन वाद्यों में ध्रुवपद गायन की भांति बिना ताल के आलाप बजाया जाता है। वित्त वाद्यों पर ख्याल गायन शैली का प्रयोग किया जाता है। यद्यपि

कुछ कलाकरों द्वारा वितत वाद्यों पर तंत्र वादन शैली अथवा तंत्रकारी बाज का भी प्रयोग किया जाता है। वित्त वाद्य, गायन की संगति हेतु उपयोगी माने गए हैं।

स्वर वाद्य के विद्यार्थी इन सबका विस्तृत अध्ययन आगे चलकर करेंगे।

तानपुरा

सरोद

रुद्रवीणा

सितार

1.6.2.2 सुषिर वाद्य – इस श्रेणी में स्वर, हवा अथवा फूंक के द्वारा उत्पन्न किए जाते हैं। जैसे बांसुरी, शहनाई, मसकबीन, क्लारनेट, हारमोनियम आदि। बांसुरी एवं शहनाई शास्त्रीय संगीत में प्रयोग किये जाते हैं। मसकबीन व क्लारनेट विदेशी वाद्य हैं। मसकबीन, उत्तरांचल क्षेत्र के लोक संगीत वाद्य की मान्यता प्राप्त कर चुका है।

शहनाई

बांसुरी

हारमोनियम

1.6.2.3 अवनद्ध वाद्य – इस श्रेणी में चमड़े से मढ़े हुए वाद्य आते हैं। मढ़े चमड़े पर हाथ या लकड़ी के आघात से विभिन्न ध्वनियां उत्पन्न की जाती है, जिनको बोल कहा जाता है। जैसे तबला, पखावज, ढ़ोलक, खंजरी, ढ़ोल आदि। अवनद्ध वाद्य संगीत में लय एवं ताल दिखाने के लिए प्रयोग किये जाते हैं। तबले का प्रयोग संगीत की हर विधा में किया जाता है जबकि पखावज का प्रयोग शास्त्रीय संगीत में ही किया जाता है। ढ़ोलक, खंजरी, ढ़ोल आदि लोक शैलियों में प्रयोग किए जाते हैं। अवनद्ध वाद्य के विद्यार्थी इन वाद्यों का सम्पूर्ण ज्ञान आगे चलकर प्राप्त करेंगे।

तबला

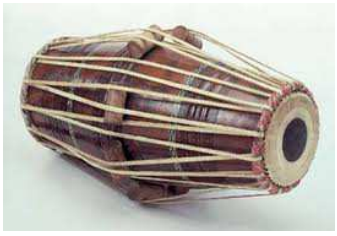
पखावज

1.6.2.4 घन वाद्य – घन वाद्यों में ध्वनि, लकड़ी या किसी वस्तु के आघात से उत्पन्न की जाती है। जैसे मंजीरा, करताल, जलतरंग, घंटातरंग, झांझ आदि।

जलतरंग

मंजीरा

1.6.3 नृत्य – पद अथवा पैर, शारीरिक अंग एवं भाव भंगिमाओं के द्वारा भाव प्रकट करने को नृत्य कहा जाता है। नृत्य के अन्तर्गत, शास्त्रीय नृत्य एवं भाव नृत्य दोनों ही स्वरूप पाए जाते हैं। शास्त्रीय नृत्य में, नृत्य की रचनाओं को पद की थाप, अंग संचालन एवं भाव भंगिमाओं के माध्यम से प्रस्तुत किया जाता है। शास्त्रीय नृत्य के अन्तर्गत कत्थक, कथकली, उड़ीसी, भरतनाट्यम, मोहिनीअट्टम, कुचिपुड़ी आदि नृत्य आते हैं। भाव नृत्य में पद का भाव नृत्य के माध्यम से प्रस्तुत किया जाता है। इसके अन्तर्गत ठुमरी पर भाव, भजन एवं गजल पर भाव, नृत्य के माध्यम से प्रस्तुत किया जाता है। फिल्मों में होने वाला नृत्य भी भाव नृत्य के अन्तर्गत ही आएगा। किसी कथानक का चित्रण, नृत्य के माध्यम से करना भी भावनृत्य ही है।

कत्थक

कथकली

उडीसी

भरतनाट्यम

1.7 संगीत की उपयोगिता

संगीत को मोक्ष प्राप्ति का साधन माना गया है। संगीत से मानसिक शान्ति मिलती है एवं तनाव दूर होता है। अतः संगीत को जीवन शैली का अंग बनाने से जीवन आनन्दमय हो जाता है। यही कारण है कि पश्चिम के लोग भारतीय संगीत को अपनी जीवन शैली का अंग बना रहे हैं। विदेशों में भारतीय संगीत का भरपूर प्रचार एवं प्रसार हो रहा है। भक्ति के लिए भी संगीत का प्रयोग अति उत्तम बताया गया है। भक्ति आन्दोलन में संगीत ने महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया था। इसके अतिरिक्त संगीत जीविका चलाने का साधन भी है। संगीत के गहन अध्ययन एवं शिक्षण प्राप्त करने के पश्चात आप संगीत के व्यवसायिक कलाकार एवं शिक्षक बन सकते हैं। संगीत, विद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में एक विषय के रूप में पढ़ाया जा रहा है जहां आपको शिक्षक का पद प्राप्त हो सकता है। व्यवसायिक कलाकारों हेतु तो अनन्त सम्भावनाएं हैं। संगीत को चिकित्सा पद्धति का अंग भी बनाया जा रहा है। विदेशों एवं भारत में भी मानसिक बिमारियों का उपचार संगीत के माध्यम से किया जा रहा है। अतः संगीत विषय के अध्ययन से आप अपना जीवन सुन्दर एवं तनाव रहित बनाऐंगे एवं इसको व्यवसाय के रूप में चुनने का विकल्प भी आपके पास होगा।

अभ्यास प्रश्न

क) लघु उत्तरीय प्रश्न :

1) संगीत की उत्पत्ति पर प्रकाश डालिए।
2) संगीत के अंगों के विषय में लिखिए।
3) वाद्यों के वर्गीकरण को समझाइए।

4) संगीत की उपयोगिता पर टिप्पणी लिखिए।
5) संगीत की विधाओं को संक्षेप में बताइए।
6) शास्त्रीय व उपशास्त्रीय संगीत की एक–एक समानता व एक–एक असमानता लिखिए।
7) स्वर व लय के विषय में लिखिए।

ख) सत्य/असत्य बताइए :

1) बांसुरी तत वाद्य की श्रेणी में आती है।
2) ठुमरी गायन शैली शास्त्रीय संगीत के अन्तर्गत आती है।
3) संगीत रत्नाकर ग्रन्थ के लेखक शारंगदेव हैं।
4) ध्रुवपद गायन शैली शास्त्रीय संगीत के अन्तर्गत आती है।
5) अवनद्ध वाद्य का प्रयोग लय व ताल दिखाने के लिए किया जाता है।

ग) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :

1) भारतीय मान्यता के अनुसार संगीत की उत्पत्ति ..... से मानी गई है।
2) ..... और ..... संगीत के मूल तत्व हैं।
3) एक सप्तक में ..... स्वर होते हैं।
4) लय के ..... प्रकार माने गए हैं।
5) भारतीय वाद्यों को ..... श्रेणी में बांटा गया है।
6) कत्थक, कथकली व भरतनाट्यम नृत्य ..... की श्रेणी में आते हैं।
7) भारत में संगीत की ..... पद्धति प्रचलित हैं।
8) राग पहाड़ी व राग मांड़ ..... में अधिक प्रयोग होता है।
9) भजन, गजल व गीत ..... संगीत के अन्तर्गत आते हैं।
10) संगीत के अन्तर्गत ....., ... व .....रूप आते हैं।

1.8 सारांश

इस इकाई के बाद आप संगीत से परिचित हो चुके होंगे। संगीत की उत्पत्ति व इसके मूल तत्वों के विषय में भी आप जान चुके होंगे। संगीत की विधाओं, इसके अंगों का ज्ञान एवं संगीत की उपयोगिता को भी आप भलीभांति समझ चुके होंगे। संगीत से जुड़ी उक्त सभी जानकारी प्राप्त करने के पश्चात आप अपने को भविष्य में संगीत विषय का गहन अध्ययन करने में समर्थ्य पाऐंगे एवं संगीत की विधाओं में भी सरलता से चयन(अपनी रूचि के अनुसार) करने में समर्थ्य हो चुके होंगे।

1.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

ख) सत्य/असत्य बताइए :

1) असत्य 2) असत्य 3) सत्य 4) सत्य 5) सत्य

ग) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :

1) ब्रह्मा 2) स्वर व लय 3) सात 4) तीन(विलम्बित, मध्य व द्रुत)
5) चार(तत, सुषिर, अवनद्ध व घन) 6) शास्त्रीय नृत्य 7) दो(उत्तर व दक्षिण भारतीय)
8) लोक संगीत 9) सुगम संगीत 10) गायन, वादन व नृत्य

1.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1) वसन्त, *संगीत विशारद*, संगीत कार्यालय, हाथरस।
2) सेन, डॉ0 अरूण कुमार, *भारतीय तालों का शास्त्रीय विवेचन,* मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल।
3) साभार गूगल।

1.11 निबन्धात्मक प्रश्न

1) संगीत की उत्पत्ति, तत्व, विधाओं व अंगों का सविस्तार वर्णन कीजिए।

इकाई 2 – भारतीय संगीत का संक्षिप्त इतिहास

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 भारतीय संगीत की उत्पत्ति
2.4 भारतीय संगीत का इतिहास
  2.4.1 प्राचीन काल
    2.4.1.1 वैदिक काल
    2.4.1.2 संदिग्ध काल
    2.4.1.3 भरत काल
  2.4.2 मध्य काल
    2.4.2.1 पूर्व मध्य काल
    2.4.2.2 उत्तर मध्य काल
  2.4.3 आधुनिक काल
    2.4.3.1 स्वतंत्रता से पूर्व
    2.4.3.2 स्वतंत्रता के बाद
2.5 सारांश
2.6 शब्दावली
2.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
2.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची
2.9 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
2.10 निबन्धात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0 संगीत के पाठ्यक्रम (बी0ए0एम0वी0–101) के प्रथम खण्ड की दूसरी इकाई है। इससे पहले की इकाईयों के अध्ययन के बाद आप बता सकते हैं कि संगीत क्या है तथा संगीत की मानव जीवन में क्या उपयोगिता है?

प्रस्तुत इकाई में भारतीय संगीत के इतिहास के बारे में बताया जाएगा। संगीत के सम्पूर्ण इतिहास के माध्यम से आपको इसके स्वरुप से अवगत कराया जाएगा।

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप भारतीय संगीत के समग्र इतिहास को भली–भांति जान पाऐंगे तथा प्राचीन से लेकर आधुनिक काल तक के संगीत के प्रचारकों के बारे में भी जान पाऐंगे।

2.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप बता सकेंगे कि :–

- भारतीय संगीत कब से अस्तित्व में आया अथवा भारतीय संगीत की उत्पत्ति कब हुई?
- किस काल में संगीत के कौन–कौन विद्वान हुए?
- किस काल में किस शासक द्वारा किस संगीतज्ञ को आश्रय दिया गया अथवा किसके शासन काल में संगीत की ज्यादा उन्नति हुई?
- आधुनिक काल में भारतीय संगीत, किन महान विभूतियों द्वारा प्रचारित–प्रसारित किया गया?

2.3 भारतीय संगीत की उत्पत्ति

मनुष्य के जन्म के साथ ही संगीत की उत्पत्ति का इतिहास भी जुड़ा हुआ है। संगीत की उत्पत्ति कब, कैसे और किसके द्वारा हुई, इस बारे में विद्वानों के अनेक मत हैं। वास्तव में संगीत का इतिहास स्वयं मानव का इतिहास है। जैसे–जैसे मनुष्य का विकास होता गया, संगीत की भी उन्नति होती गई।

भारतीय संगीत की उत्पत्ति के सम्बन्ध में विद्वानों ने मुख्य तीन आधार माने हैं :–

1) धार्मिक आधार – धार्मिक दृष्टिकोंण से शिव, ब्रहमा, सरस्वती, गन्धर्व और किन्नर ये देवता संगीत के प्रेरक माने जाते हैं। शिव के हाथों में डमरू, सरस्वती के हाथों में वीणा, स्वर्ग में किन्नर (वादन करने वाले), गन्धर्व (गायन करने वाले) और अप्सराएं (नृत्य करने वाली स्त्रियॉं) आदि से स्पष्ट है कि भारतीय संगीत अत्यन्त प्राचीन है।

2) प्राकृतिक आधार – इस आधार के अनुसार संगीत की उत्पत्ति प्रकृति से हुई। मनुष्य ने अपने जीवन के आस–पास संगीतमय वातावरण देखा। जैसे नदियों की लहरों से, सागर की तरंगों से, पक्षियों के कलरव से, हवाओं के झोंकों आदि की ध्वनियों को सुनकर ही मनुष्य ने संगीत को जन्म दिया होगा। मनुष्य ने अपनी भावनाओं को ऊॅंची–नीची ध्वनियों की सहायता से व्यक्त किया होगा।

2) मनोवैज्ञानिक आधार – इस आधार के अनुसार जैसे–जैसे मनुष्य क्रमिक विकास की सीढ़ियॉं चढ़ता गया वैसे–वैसे ही विभिन्न कलाऐं उसके विकसित जीवन से जुड़ती गई। अतः संगीत आदि सभी कलाऐं क्रमिक विकास से जुडी है। बच्चे के पैदा होते ही उसके कंठ से ध्वनि निकलती है, गायन और वादन इसी ध्वनि का सहज विकास है।

2.4 भारतीय संगीत का इतिहास

भारतीय संगीत के इतिहास को हम तीन भागों में बांट सकते हैं :

1. प्राचीन काल (आदि काल से 800 ई0 तक)
2. मध्य काल (800 से 1800 ई0 तक)
3. आधुनिक काल (1800 ई0 से वर्तमान तक)

2.4.1 प्राचीन काल (आदि काल से 800 ई0 तक) :

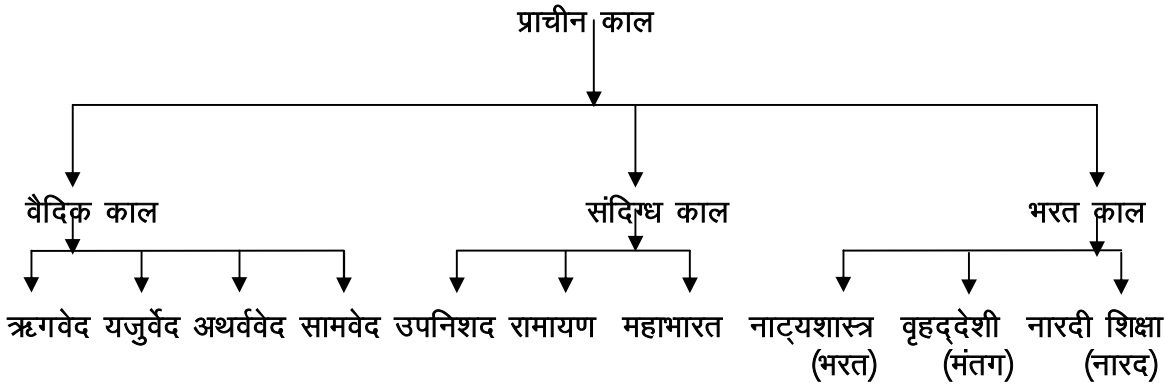

उपरोक्त सारणी के अध्ययन से आप समझ पाऐंगे कि प्राचीन काल के इतिहास को हमने पुनः तीन काल में विभाजित किया है।

1) वैदिक काल 2) संदिग्ध काल 3) भरत काल

2.4.1.1 वैदिक काल – इस काल का प्रारम्भ आदि काल में ईसा से 1000 वर्ष पूर्व तक माना गया है। इसी काल में हिन्दु धर्म के चारों वेदों की रचना हुई, इसलिए इसे वैदिक काल कहा जाता है। चारों वेदों के नाम है – ऋग्वेद, यजुर्वेद, अथर्ववेद व सामवेद। इनमें **'ऋग्वेद'** विश्व का सबसे प्राचीन ग्रन्थ हैं, जिसके संग्रहित मंत्रों को 'ऋक' या 'ऋचा' कहते हैं। इसके सभी मंत्र छन्दोबद्ध है, जिनमें अनेक देवी–देवताओं की स्तुतियां उपलब्ध हैं। **यजुर्वेद** में यज्ञों का विधान है। **अथर्ववेद** में सुखमूलक एवं कल्याणप्रद मंत्रों का संग्रह तथा *तांत्रिक* विधान दिया है। चारों वेदों में सामवेद प्रारम्भ से अन्त तक संगीतमय है। सामगान में केवल तीन स्वर प्रयोग किये जाते हैं, जिनके नाम है – उदात्त, अनुदात्त व स्वरित। धीरे–धीरे स्वरों की संख्या 3 से 4, 4 से 5 तथा 5 से 7 हुई।

2.4.1.2 संदिग्ध काल – इस काल का समय 1000 ईसा वर्ष पूर्व से 1 ईसवी तक है। इस काल में संगीत का कोई ग्रन्थ नहीं लिखा गया, केवल कुछ उपनिषद, महाभारत, रामायण आदि ग्रन्थ हैं, जिनमें संगीत सम्बन्धी थोड़ी बहुत जानकारी मिलती है। छांदोग्य और वृहदारण्यक उपनिषदों में संगीत का उल्लेख मिलता है तथा संगीत वाद्यों के नाम भी मिलते हैं। महाभारत में सात स्वरों और गन्धार ग्राम का उल्लेख मिलता है। रामायण में विभिन्न प्रकार के वाद्यों का उल्लेख मिलता है। रावण स्वयं संगीत का एक बड़ा विद्वान था। उसने *रावणस्त्रन्* नामक वाद्य का अविष्कार कियज्ञं

2.4.1.3 भरत काल – इस काल का समय 1 ई0 से 800 ई0 तक है। इस काल की पहली विशेषता यह है कि जिस प्रकार आजकल 'राग गायन' प्रचलित है उस समय 'जाति गायन' प्रचलित था। इस काल की दूसरी विशेषता यह है कि इसी काल में सर्वप्रथम 3 ग्राम, 22 श्रुतियां, 7 स्वर, 18 जातियां और 21 मूर्च्छनाओं का वर्णन मिलता है।

इस काल के मुख्य ग्रन्थ :

1.नाट्यशास्त्र (लेखक–भरत) – यह भारतीय संगीत का महत्वपूर्ण ग्रन्थ है, जिसका रचना काल पॉचवीं शताब्दी माना जाता है। यह ग्रन्थ नाट्य से सम्बन्धित है, किन्तु 28–33वें अध्याय तक इसमें संगीत के विषय में प्रकाश डाला गया है।

2.बृहददेशी (लेखक–मतंग) – इस ग्रन्थ के रचनाकाल के विषय में मतभेद हैं। कुछ विद्वान इसे तीसरी, कुछ चौथी, कुछ पॉचवी, कुछ छठी तथा कुछ आठवीं शताब्दी का ग्रन्थ मानते हैं। संगीत के इतिहास में सर्वप्रथम इसी ग्रन्थ में 'राग' शब्द प्रयोग किया गया है। राग शब्द का वर्तमान परिप्रेक्ष्य में काफी महत्व है। इसमें 6 अध्याय माने गए हैं।

3. नारदीय शिक्षा (लेखक–नारद) – यह ग्रन्थ सातवीं शताब्दी के लगभग लिखा गया। इसमें प्रथम बार पुरूष राग और स्त्री राग के आधार पर आगे चलकर राग–रागिनी पद्धति का विकास हुआ।

2.4.2 मध्य काल(800 से 1800 ई0 तक)

मध्य काल की अवधि 8 वीं शताब्दी से 18 वीं शताब्दी तक मानी जाती है। इस काल को आप निम्न सारणी के माध्यम से जान पाऐंगे कि मध्य काल में भारतीय संगीत की उन्नति के लिए कौन–कौन से ग्रन्थकार हुए तथा उन्होंने कौन से ग्रन्थ लिखे।

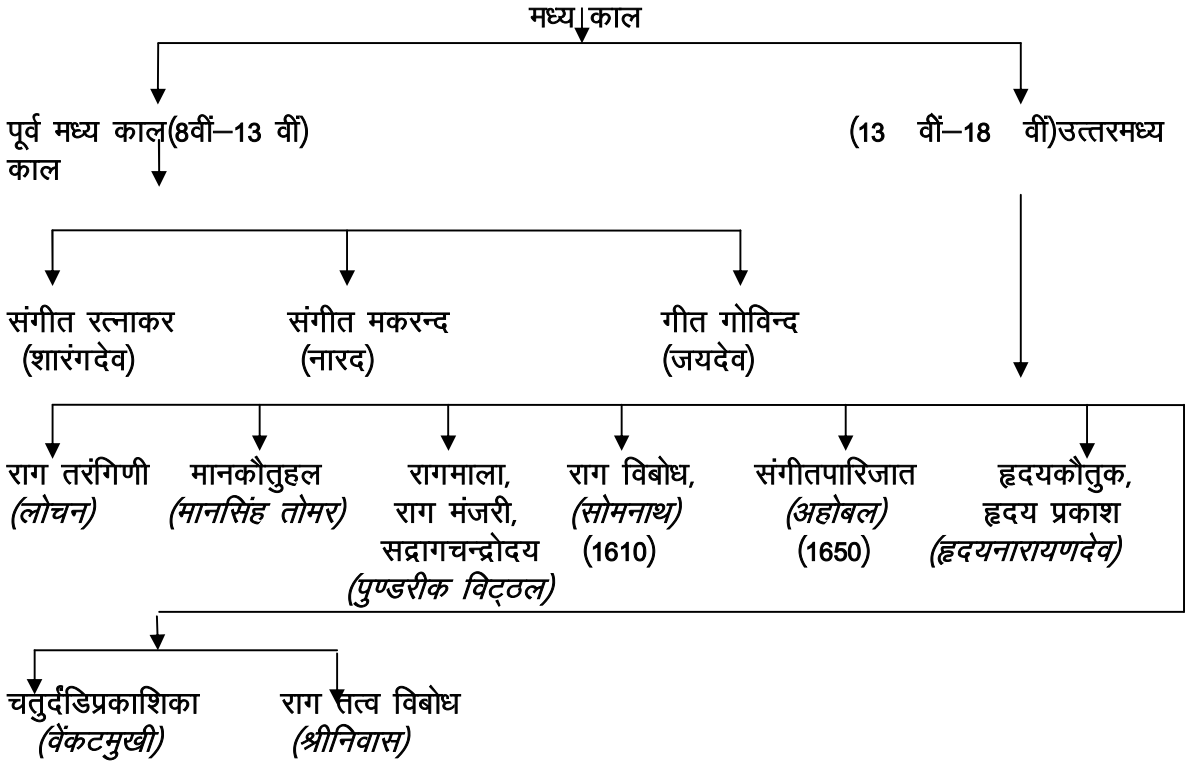

उपरोक्त सारणी के माध्यम से आप जान चुके हैं कि मध्य काल को फिर से दो विभागों में विभाजित किया गया है – पूर्व मध्य काल व उत्तर मध्य काल।

2.4.2.1 पूर्व मध्य काल – इस काल की विशेषता है कि जिस प्रकार आज राग गायन प्रचलित है, उसी प्रकार उस समय में प्रबन्ध गायन प्रचलित था। इसलिए इसे प्रबन्ध काल भी कहते हैं। इस काल में लिखे गए संगीत सम्बन्धी कुछ महत्वपूर्ण ग्रन्थ निम्न हैं :–

1. संगीत मकरन्द – इस ग्रन्थ के रचयिता नारद जी थे। रागों को स्त्री, पुरूष और नपुंसक वर्गों में विभाजित करने का वर्णन सर्वप्रथम इसी पुस्तक में प्राप्त होता है। अतः इसे राग–रागिनी पद्धति का आधार ग्रन्थ कहा जाता है।

2. गीत गोविन्द – इसकी रचना 12 वीं शताब्दी में पं0 जयदेव द्वारा हुई थी। पं0 जयदेव केवल कवि ही नहीं अपितु गायक भी थे। इस पुस्तक में प्रबन्धों और गीतों का संग्रह है, किन्तु स्वरलिपि न होने से उन्हें उसी प्रकार से नहीं गाया जा सकता है।

3. संगीत रत्नाकर – इसकी रचना 13 वीं शताब्दी में शारंगदेव द्वारा हुई। यह ग्रन्थ केवल उत्तर भारतीय संगीत में ही नहीं बल्कि दक्षिणी भारतीय संगीत में भी बहुत महत्वपूर्ण समझा जाता है।

2.4.2.2 उत्तर मध्य काल – इस काल में फारसी और उत्तर भारतीय संगीत का मिश्रित रूप भली–भांती विकसित हुआ। अतः यह काल *संगीत का स्वर्ण युग* कहा गया है। अधिकांश मुसलमान शासकों को संगीत से विशेष प्रेम था। अतः उन्होंने अपने दरबार में संगीतज्ञों को आश्रय दिया और संगीत को प्रोत्साहन दिया।

इस काल के शासक, उनका राज्यकाल और दरबारी संगीतज्ञ

शासक	राज्यकाल	दरबारी संगीतज्ञ	अविष्कारक
अलाउद्दीन खिलजी	1269–1316 (दिल्ली)	अमीर खुसरो	सितार, कव्वाली, तराना, तबला, रागों में साजगिरी सरमपरदा आदि
सुल्तान हुसैन शर्की	1458–1499(जौनपुर)	स्वयं	बड़ा ख्याल व रागों में सिन्धुभैरवी, जौनपुरी, जौनपुरी तोड़ी, आदि
राजा मानसिंह तोमर	1486–1517(ग्वालियर)	स्वयं व नायक बख्श (ध्रुवपदिए)	
अकबर	1556–1605	तानसेन, नायक बैजु, नौबरत खां, तानरंग खां, गोपाल नायक	दरबारी कान्हडा, मियॉ की सारंग, मियॉ मल्हार, मियॉ की तोडी, रामकली, मल्हार आदि(आविष्कारक तानसेन)
जहॉगीर	1605–1627	विलास खॉ, छतर खॉ, मक्खू आदि	
शाहजहॉ	1627–1658	दिगरखॉ लाल खॉ, विलास खॉ	
मुहम्मद शाह रंगीले	1719–1748	सदारंग–अदारंग, शौरी मियॉ	ख्याल(सदारंग–अदारंग), टप्पा(शौरी मियां)

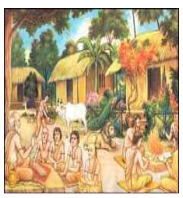
गुरूकुल

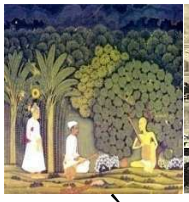
तानसेन

अमीर खुसरो

मुहम्मद शाह रंगीले

इस काल में विभिन्न शासकों के शासन काल में अत्यन्त उपयोगी ग्रन्थ भी लिखे गए :

1.राग तरंगिणी – 15 वीं शताब्दी के आरम्भ में पं0 लोचन ने 'राग तरंगिणी' नामक ग्रन्थ लिखा। उन्होंने राग–रागिनी तथा राग वर्गीकरण के स्थान पर थाट राग पद्धति को स्थान दिया तथा कुल 12 थाट माने। 12 थाटों में ही अपने समय के सब रागों की उत्पत्ति की।

2.मान कौतुहल – यह ग्रन्थ ग्वालियर के राजा मानसिंह तोमर के द्वारा लिखा गया। राजा मानसिंह ने तत्कालीन प्रसिद्ध संगीतज्ञों का एक सम्मेलन कराया। उस सम्मेलन में संगीत शास्त्र पर विचार किया गया, जिनका संग्रह राजा मानसिंह ने मान–कौतुहल ग्रन्थ के रूप में किया।

3.राग माला, राग मंजरी, सद्रागचन्द्रोदय – इन ग्रन्थों को पुण्डरीक विट्ठल द्वारा लिखा गया है। सद्रागचन्द्रोदय में इन्होंने दक्षिण संगीत पर लिखा तथा राग माला व राग मंजरी में उत्तरी पद्धति का वर्णन किया है।

4.राग विबोध – 1610 ई0 में दक्षिण के विद्वान पं0 सोमनाथ ने 'रागविबोध' नामक ग्रन्थ की रचना की। इसमें उत्तरी और दक्षिणी संगीत को एक में समन्वित करने का प्रयत्न किया गया है।
5.संगीत पारिजात – 1650 ई0 में पं0 अहोबल द्वारा यह ग्रन्थ लिखा गया। इस ग्रन्थ में प्रथम बार वीणा के तार पर बारह स्वरों की स्थापना का वर्णन है। उन्होंने अपना शुद्ध सप्तक काफी को माना था।

लगभग इसी समय पं0 हृदयनारायण देव द्वारा हृदयकौतुक और हृदयप्रकाश ग्रन्थ लिखे गए।

6.चतुर्दण्डिप्रकाशिका – यह ग्रन्थ 1640–1650 ई0 के लगभग, दक्षिण के विद्वान पं0 वेंकटमुखी द्वारा लिखा गया था। उन्होंने यह सिद्ध किया कि उस समय के स्वर सप्तक से, अधिक से अधिक 72 थाटों की रचना हो सकती है तथा एक थाट से कुल 484 राग उत्पन्न हो सकते हैं। यद्यपि ग्रन्थकार ने एक सप्तक में 12 स्वर माने हैं किन्तु एक स्वर के कई नाम भी स्वीकार किए हैं। इसी समय में भावभट्ट ने तीन ग्रन्थ लिखे – *अनूप संगीत रत्नाकर, अनूप संगीत विलास* तथा *अनूपांकुश*।
7.राग तत्व विबोध – 18 वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में श्रीनिवास ने *'राग तत्व विबोध'* नामक ग्रन्थ की रचना की। इस पुस्तक में उन्होंने पं0 अहोबल की भॉति वीणा के तार की लम्बाई पर भिन्न–भिन्न नापों से 12 स्वरों की स्थापना की। उन्होंने अहोबल के समान ही काफी थाट को अपना शुद्ध थाट रखा।

2.4.3. आधुनिक काल (1800 ई0 से वर्तमान तक)

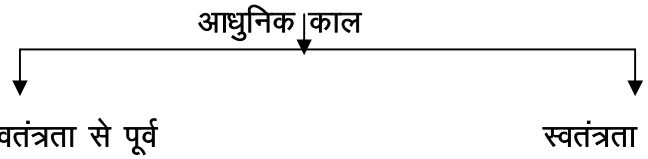

स्वतंत्रता से पूर्व – 18 वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में भारत में अंग्रेजों का शासन काल था। अंग्रेजी सभ्यता के परिणामस्वरूप संगीत का विकसित रूप कुंठित होता चला गया। संगीतज्ञों को अपने प्रति अंग्रेजों के उपेक्षित एवं उदासीन व्यवहार के कारण अपनी आजीविकोपार्जन हेतु संगीत कला को व्यवसायिक रूप प्रदान करना पड़ा। जिसका परिणाम यह हुआ कि वैदिक काल की उत्कृष्ठ संगीत कला समाज के निम्न वर्ग में पहुॅच गयी। जहॉ उसका एकमात्र उद्देश्य क्षणिक सुख रह गया। समाज ऐसे व्यक्तियों से घृणा करता था जिसका परिणाम यह हुआ कि वह संगीत से भी घृणा करने लगा। संगीत आमोद–प्रमोद का साधन बन गया, यहॉ तक कि सभ्य समाज में संगीत का नाम लेना भी पाप समझा जाने लगा। भारतीय संगीत से प्रभावित अंग्रेजी विद्वान सर विलियम जोन्स व कैप्टन डे ने संगीत को पुनः उबारने का प्रयास किया तथा कुछ पुस्तकें लिखी जिसका समाज में अच्छा असर हुआ और संगीत के प्रति अनादर का भाव भी कम हुआ। इसी समय बंगाल के **'सर सौरेन्द्रमोहन टैगोर** ने 19 वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में 'यूनिवर्सल हिस्ट्री ऑफ म्यूजिक' लिखी। उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य में एक बार फिर वाजिद अली शाह के दरबार में संगीत का सम्मान हुआ। लखनऊ के गुलाम रज़ा साहब ने *रजाखानी* तथा मसीत खां में *मसीतखानी* गत का आविष्कार करके सितार पर उसके वादन का प्रचार किया।

संगीत के इस काल में दो महापुरूष (पं0 विष्णु नारायण भातखण्डे व पं0 विष्णु दिगम्बर पलुस्कर) इस क्षेत्र में आए, जिन्होंने संगीत का उद्धार किया। इन दोनों ही महानुभावों ने देश में जगह–जगह घूम कर संगीत का प्रचार–प्रसार किया एवं अनेक संगीत विद्यालय की स्थापना की जिनमें से प्रमुख हैं :–

1. म्यूजिक कालेज, कलकत्ता।
2. स्कूल ऑफ इन्डियन म्यूजिक, बम्बई।
3. गान्धर्व महाविद्यालय, पूना।
4. गान्धर्व महाविद्यालय मण्डल।
5. भातखण्डे संगीत विश्वविद्यालय (मैरिस कालेज), लखनऊ।
6. प्रयाग संगीत समिति, इलाहाबाद।

आप दोनों ने संगीत से सम्बन्धित कई पुस्तकें भी लिखी।

पं0 विष्णु दिगम्बर पलुस्कर :
1. संगीत बाल प्रकाश, भाग 1–3
2. संगीत बाल बोध, भाग 1–5
3. भारतीय संगीत लेखन पद्धति
4. बालोदय संगीत
5. संगीत तत्वदर्शक
6. राग प्रवेश, भाग 1–19 आदि

पं0 विष्णु नारायण भातखण्डे :
1. हिन्दुस्तानी संगीत पद्धति–क्रमिक पुस्तक मालिका, 6 भागो में
2. स्वर मालिका (गुजराती)
3. अभिनव राग मंजरी (संस्कृत)
4. श्रीमल्लक्ष्य संगीत (संस्कृत)
5. हिन्दुस्तानी संगीत पद्धति (चार भागों में)–मराठी में (हिन्दी में भातखण्डे संगीत शास्त्र)

स्वतंत्रता के बाद – स्वाधीन भारत के उन्मुक्त पर्यावरण में संगीत का प्रसार तीव्र गति से होने लगा। भारत सरकार ने संगीत कला के विकास में महान योगदान दिया। *1952* से संगीत कला को प्रोत्साहन देने हेतु कुशल संगीतज्ञों को *राष्ट्रपति पदक* प्रदान करना आरम्भ किया। *1953* में *''संगीत नाटक अकादमी''* तथा *1954* में *''ललित कला अकादमी''* की स्थापना की गई। आकाशवाणी के विभिन्न केन्द्र स्थापित किए गए। आकाशवाणी के स्तर को बढ़ाने के लिए उसमें भाग लेने वाले कलाकारों की ध्वनि–परीक्षा हुई। ख्याति प्राप्त वृद्ध संगीतज्ञों को मान पत्र भेंट किए जाने लगे। *''संगीत''* तथा *''संगीत कला विहार''* जैसी संगीत पत्रिकाओं का प्रकाशन किया गया। श्रेष्ठ संगीतज्ञों को विदेश में अपनी कला को प्रदर्शित करने हेतु सुविधाएं प्रदान की गई। स्कूल तथा महाविद्यालयों में संगीत को एक विषय के रूप में पाठ्यक्रम में सम्मिलित किया गया। आकाशवाणी तथा दूरदर्शन के विभिन्न केन्द्रों से शास्त्रीय संगीत तथा सुगम संगीत (भजन, गजल, गीत आदि) के कार्यक्रम प्रसारित किए जाने लगे। इन प्रयासों के कारण आज संगीत जन साधारण के अधिक निकट है।

आधुनिक काल में हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत के अन्तर्गत ध्रुवपद गायकी का प्रचार कम हो गया है तथा ख्याल शैली अधिक प्रचलित हो गयी है। आज ठुमरी गायकी भी संगीत प्रेमियों के मध्य काफी लोकप्रिय है। गायन, वादन तथा नृत्य की संगति हेतु तबला एक लोकप्रिय, सक्षम तथा बहुप्रचलित ताल वाद्य बन चुका है।

मुम्बई की *'सुर सिंगार संसद'* नामक संस्था प्रत्येक वर्ष युवा कलाकारों के लिए *'कल का कलाकार'* नामक संगीत सम्मेलन का आयोजन कर उन्हें *'सुरमणि', 'तालमणि'* आदि अलंकारों से विभूषित कर प्रोत्साहित करती है। इसके अतिरिक्त *'साहित्य कला परिषद'* द्वारा आयोजित युवा महोत्सव में नवोदित कलाकारों को अपनी प्रतिभा प्रदर्शित करने हेतु अवसर प्रदान किए जाते हैं।

आधुनिक काल में संगीत की स्थिति के अध्ययन से यह साफ पता चलता है कि आज गजल, भजन, लोक संगीत तथा फिल्मी संगीत की ही तरह शास्त्रीय संगीत में भी जन सामान्य की रूचि है। श्रोताओं की मानसिक चंचलता, समयाभाव व उनकी रूचि को समझते हुए शास्त्रीय संगीत के

कलाकारों ने भी परम्परागत शैली से थोड़ा हटकर अपने संगीत में कुछ परिवर्तन किए हैं। क्योंकि संगीत समारोहों व संगीत महफिलों में सभी प्रकार के श्रोता सम्मिलित होते हैं और संगीत का मुख्य लक्ष्य श्रोताओं के हृदय में आनन्द का सृजन करना है। वास्तव में प्राचीनता व नवीनता के सम्मिश्रण से ही संगीत को सहज, सुन्दर, जनरूचि के अनुरूप एवं लोकप्रिय बनाया जा सकता है।

अभ्यास प्रश्न

(अ) रिक्त स्थानों की पूर्ति :

1. नाट्यशास्त्र के रचनाकर ———————— हैं।
2. ———————— वेद प्रारम्भ से अन्त तक संगीतमय है।
3. अमीर खुसरो के आश्रयदाता ———————————— थे।
4. तानसेन———————————— के दरबार में संगीतज्ञ थे।
5. संगीत रत्नाकर———————————— द्वारा लिखा गया है।
6. प्राचीन काल में ———————————— गायन प्रचलित था।
7. गीत गोविन्द ———————————— द्वारा लिखा गया।
8. सर्वप्रथम वीणा के तार पर स्वरों की स्थापना ———————————— ने की।

(ब) वस्तुनिष्ठ प्रश्न :

1) टप्पा के आविष्कार का श्रेय किसको जाता है ?

क) गुलाम रजा **ख)** गुलाम रसूल **ग)** मियॉ शोरी **घ)** मियॉ जानी

2) भरत ने नाट्यशास्त्र की रचना किस शताब्दी में की ?

क) दूसरी शताब्दी **ख)** तीसरी शताब्दी **ग)** चौथी शताब्दी **घ)** पॉचवी शताब्दी

3) राग दरबारी कान्हड़ा बनाने वाले संगीतज्ञ कौन थे ?

क) स्वामी हरिदास **ख)** तानसेन **ग)** गोपाल नायक **घ)** अमीर खुसरो

(स) लघु उत्तरीय प्रश्न :

1) भारतीय संगीत के प्राचीन काल का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।

2) मध्य काल में संगीत के कौन–कौन से ग्रन्थ लिखे गए ? संक्षेप में बताइए।

2.5 सारांश

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप जान चुके होंगे कि भारतीय संगीत का इतिहास अत्यन्त प्राचीन है। आप यह भी जान चुके होंगे कि भिन्न–भिन्न कालों में किस तरह भारतीय संगीत का विकास हुआ तथा कौन–कौन से ग्रन्थ लिखे गए? प्राचीन काल से लेकर आधुनिक काल तक भारतीय संगीत अनेक परिस्थितियों से गुजरा। जैसे **मध्य काल** को *संगीत का स्वर्ण युग* इसलिए कहा गया क्योंकि इस काल में भारतीय संगीत का बहुत प्रचार–प्रसार हुआ, अनेक नए वाद्यों, रागों तथा तालों के आविष्कार तथा अनेक ग्रन्थ भी लिखे गए। इस इकाई के अध्ययन के बाद आप यह भी जान चुके होंगे कि वर्तमान में सरकार, निजी संस्थाओं, संगीतज्ञों, आकाशवाणी, दूरदर्शन, संगीत नाटक अकादमी, ललित कला अकादमी आदि अनेक माध्यमों से भारतीय संगीत समाज में लोकप्रिय हो रहा है और उच्चतम शिखरों को छू रहा है।

2.6 शब्दावली

1. **प्रबन्ध गायन** – स्वर, पद और लय युक्त गायन।
2. **जाति गायन** – प्राचीन काल में राग के स्थान पर जातियां गाई जाती थी। ये जातियां वास्तव में मूल राग थी। 18 प्रकार की जातियां, दो ग्रामों (षड़ज ग्राम व मध्यम ग्राम) की चौदह मूर्च्छनाएं अनेक स्वरालियों को जन्म देती थी। उन स्वरालियों में विभिन्न गीतों की रचना की और गाई जाती थी।
3. **आजीविकोपार्जन** – जीविका चलाने हेतु।

4. व्यवसायिक – रोजगार सम्बन्धी।

2.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

(अ) रिक्त स्थानों की पूर्ति :

1) भरत **2**) सामवेद **3**) अल्लाउद्दीन खिलजी **4**) अकबर
5) शारंगदेव **6**) जाति गायन **7**) जयदेव **8**) अहोबल

(ब) वस्तुनिष्ठ प्रश्न :

1. **(ग)** मियां शोरी **2**. **(घ)** पांचवी शताब्दी **3**. **(ख)** तानसेन

2.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. श्रीवास्तव, श्री हरीश चन्द्र, *राग परिचय सभी भाग*, संगीत सदन प्रकाशन, इलाहाबाद।
2. वसन्त, *संगीत विशारद*, संगीत कार्यालय, हाथरस।
3. परांजपे, श्रीधर, *संगीत बोध*।
4. गोवर्धन, श्रीमती शान्ति, *संगीत शास्त्र दर्पण*।
5. साभार गूगल।

2.9 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1.'संगीत' मासिक पत्रिका, संगीत कार्यालय, हाथरस।
2. चौधरी, डा0 सुभाष रानी, संगीत के प्रमुख शास्त्रीय सिद्धान्त, कनिष्का पब्लिशर्स, नई दिल्ली।
3. बंसल, डॉ0 परमानन्द, संगीत सागरिका, प्रासंगिक पब्लिशर्स, नई दिल्ली।

2.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1. भारतीय संगीत के इतिहास का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।
2. आधुनिक काल में संगीत की प्रगति पर प्रकाश डालिए।

इकाई 3 – परिभाषा(स्वर, श्रुति, आलाप, राग, सप्तक, ताल, लय, आवर्तन, ताली, खाली, विभाग व ठेका)

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 परिभाषाएं
3.3.1 स्वर 3.3.2 श्रुति
3.3.3 आलाप 3.3.4 राग
3.3.5 सप्तक 3.3.6 ताल
3.3.7 लय 3.3.8 आवर्तन
3.3.9 ताली 3.3.10 खाली
3.3.11 विभाग 3.3.12 ठेका
3.4 सारांश
3.5 शब्दावली
3.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
3.7 संदर्भ ग्रन्थ सूची
3.8 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
3.9 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0 संगीत के पाठ्यक्रम (बी0ए0एम0वी0–101) के प्रथम खण्ड की तीसरी इकाई है। इससे पहले की इकाईयों के अध्ययन के बाद आप बता सकते हैं कि संगीत किसे कहते हैं। आप भारतीय संगीत के इतिहास से भी परिचित हो चुके होंगे।

प्रस्तुत इकाई में संगीत की विधाओं से सम्बन्धित मूलभूत परिभाषाओं(स्वर, श्रुति, आलाप, सप्तक, राग, आदि) के बारे में विस्तार से बताया जाएगा। जैसे स्वर क्या है? कितने स्वर होते हैं? श्रुति किसे कहते हैं, तथा बाईस श्रुतियों के नाम आदि।

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप संगीत की विधाओं से सम्बन्धित मूलभूत परिभाषाओं को समझ सकेंगे जिससे आपको भारतीय शास्त्रीय संगीत को समझने में आसानी होगी।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप :–

- संगीत में प्रयोग होने वाले मूलभूत शब्दों के अर्थ को समझ सकेंगे।
- भारतीय शास्त्रीय संगीत में इन परिभाषाओं (श्रुति, स्वर, आलाप इत्यादि) के महत्व को समझ सकेंगे।
- इन मूलभूत शब्दों व इनके अन्तर को समझ कर, अपने गायन अथवा वादन में इनका सही प्रयोग कर सकेंगे।

3.3 परिभाषाएं

प्रस्तुत इकाई में संगीत (गायन तथा वादन) से सम्बन्धित निम्न परिभाषाओं को समझाया जा रहा है।

3.3.1 स्वर – नियमित आन्दोलन संख्या वाली ध्वनि ''स्वर'' कहलाती है। यही ध्वनि संगीत में काम आती है, जो कान को मधुर लगती है तथा चित्त को प्रसन्न करती है। इस ध्वनि को संगीत की भाषा में ''नाद'' कहते हैं। इस आधार पर संगीतोपयोगी नाद 'स्वर' कहलाता है।

पं0 ओंकारनाथ ठाकुर ने अपनी कृति 'संगीतांजली' भाग–चार, पृष्ठ–3 पर स्वर की परिभाषा इस प्रकार दी है – *''वह अनुरणानात्मक नाद जो किसी प्रकार के आघात से उत्पन्न होता है, जो रंजक हो, जो श्रोत्रचित्त को सुख देने वाला हो, जो निश्चित श्रुति स्थान पर रहते हुए भी अपनी जगह से ऊपर या नीचे हटने पर विकृत होता है, और आत्मा की सुख–दःख आदि संवेदनाओं को अभिव्यक्त करने में सहायक हो, उसे 'स्वर' कहते हैं''*।

मुख्य स्वर सात होते हैं – **षडज(सा), ऋषभ (रे), गन्धार (ग), मध्यम (म), पंचम (प), धैवत (ध), निषाद (नी)**

स्वरों के प्रकार :–

स्वरों के मुख्य दो प्रकार माने जाते हैं।

1. शुद्ध स्वर
2. विकृत स्वर

1. **शुद्ध स्वर** – जब स्वर अपने निश्चित स्थान पर रहते हैं, *शुद्ध स्वर* कहलाते हैं। इनकी संख्या 7 मानी गयी है। इनके संक्षिप्त नाम हैं – **सा, रे, ग, म, प, ध, नि**।

2. **विकृत स्वर** – पॉच स्वर ऐसे होते हैं जो शुद्ध तो होते हैं साथ ही साथ विकृत भी होते हैं। जो स्वर अपने निश्चित स्थान से थोड़ा चढ़े अथवा उतरे हुए होते हैं, वे *'विकृत स्वर'* कहलाते हैं। इस प्रकार विकृत स्वर के भी दो प्रकार होते हैं – **क)** कोमल विकृत **ख)** तीव्र विकृत

जब कोई स्वर अपने निश्चित स्थान(शुद्धावस्था) से नीचा होता है तो उसे *'कोमल विकृत'* कहतें हैं और जब कोई निश्चित स्थान से ऊपर होता है तो उसे *'तीव्र विकृत'* कहते हैं। सप्तक में षड़ज और पंचम के अतिरिक्त शेष स्वर जैसे *रे, ग, ध, नि* स्वर कोमल विकृत तथा *म* तीव्र विकृत होता है। इस प्रकार एक सप्तक में 7 शुद्ध, 4 कोमल और 1 तीव्र स्वर, कुल मिलाकर 12 स्वर होते हैं। इनका क्रम इस प्रकार है :– *स, रे, रे, ग, ग, म, म, प, ध, ध, नी, नि, सां*

स्वरों को एक और दृष्टिकोण से विभाजित किया गया है – 1. चल स्वर 2. अचल स्वर

1. **चल स्वर** – वे स्वर जो शुद्ध होने के साथ–साथ विकृत (कोमल अथवा तीव्र) भी होते है उन्हे चल स्वर कहते हैं। जैसे *रे, ग ध, नी* कोमल और *म* तीव्र।

2. **अचल स्वर** – जो स्वर सदैव शुद्ध होते हैं, विकृत कभी नहीं होते, अचल स्वर कहलाते हैं। जैसे – सा (षड़ज) और प (पंचम)।

3.3.2 श्रुति – संगीतोपयोगी नाद जो कान को साफ–साफ सुनाई पड़े 'श्रुति' कहलाती है। शास्त्रकार श्रुति की परिभाषा इस प्रकार करते हैं– **'' श्रुयते इति श्रुतिः''** अर्थात जो आवाज कान को सुनाई दे वह 'श्रुति' है। ध्यान से देखें तो यह परिभाषा अपने में पूर्ण नही है, क्योंकि संगीतोपयोगी आवाज को छोड़कर और भी आवाजें कान को सुनाई पड़ती है, पर वे श्रुति नहीं है। श्रुति की परिभाषा हम इस प्रकार कर सकते हैं – *''वह संगीतोपयोगी ध्वनि जो कानों को साफ–साफ सुनाई पड़े तथा जो एक–दूसरे से स्पष्ट तथा अलग पहचानने में आ सके, उसे श्रुति कहते हैं।''* अलग तथा स्पष्ट होने के

कारण श्रुति की संख्या एक सप्तक में निश्चित हो पाती है। शास्त्रकारों ने एक सप्तक में कुल 22 श्रुतियॉ मानी हैं। 22 श्रुतियों के नाम हैं :–

1.	तीव्रा	**9.**	क्रोधा	**17.**	आलापिनी
2.	कुमुद्वती	**10.**	वज्रिका	**18.**	मदन्ती
3.	मन्दा	**11.**	प्रसारिणी	**19.**	रोहिणी
4.	छन्दोवती	**12.**	प्रीति	**20.**	रम्या
5.	दयावती	**13.**	मार्जनी	**21.**	उग्रा
6.	रंजनी	**14.**	क्षिति	**22.**	क्षोभिणी
7.	रक्तिका	**15.**	रक्ता		
8.	रौद्री	**16.**	संदीपनी		

3.3.3 आलाप – किसी राग के स्वरों का उसके वादी, संवादी तथा विशेष स्वरों को दिखलाते हुए विस्तार करना और साथ में उसे वर्ण, गमक, अलंकार, आदि से विभूषित करना, उस राग का 'आलाप' कहलाता है। राग का स्वरूप स्पष्ट करने के लिए उसके स्वरों को सजाकर धीमी लय में उसका आलाप करते हैं। आलाप द्वारा गायक अथवा वादक, राग के विशेष स्वरों व राग के स्वरूप को श्रोताओं के सम्मुख प्रस्तुत करता है और अपनी भावनाओं को राग के स्वरों द्वारा अभिव्यक्त करता है।

प्राचीन समय में आलाप करने के कई प्रकार प्रचलित थे, जो रागालाप, स्वस्थान–नियम, आलाप्तिगान, रूपकालाप आदि नामों से पुकारे जाते थे। किन्तु आधुनिक समय में आलाप गायन दो प्रकार से होता है – एक तो गीत गाने से पहले ताल रहित होता है, जिसे गायक नोम–तोम तथा न, न, री, द, त, न, आदि शब्दों द्वारा अथवा आकार में गाता है, तथा दूसरा गीत के साथ ताल–बद्ध होता है जिसे गायक आकार में अथवा गीत के बोलों के साथ गाता है।

आधुनिक आलाप – आधुनिक समय में गीत के पूर्व आलाप गायन का बहुत महत्व है। इस आलाप को हम चार भागों में बांट सकते हैं :–

1.स्थाई – इस भाग में गायक मध्य सप्तक से राग का आलाप शुरू करता है। एक–एक स्वर को बढ़ाते–घटाते हुए मन्द्र या मध्य सप्तक में इसका चलन होता है। अधिक से अधिक मध्य सप्तक के मध्यम या पंचम तक ही इसका विस्तार होता है।

2.अन्तरा – इस भाग में अधिकतर आलाप मध्य सप्तक के गन्धार, मध्यम अथवा पंचम स्वर से आरम्भ होता है तथा उसका विस्तार अधिक से अधिक मध्य सप्तक के निषाद अथवा तार षड़ज तक होता है।

3.संचारी – इस भाग में तार सप्तक के स्वरों का महत्व अधिक होता है। ख्याल गायक तथा वादक इस भाग में आलाप की लय बडा़ देता हैं। इसमें मींड़, आन्दोलन, गमक, खटका, मुर्की आदि का प्रयोग अधिक होता है तथा बीच–बीच में आलापों का सम दिखाया जाता है।

4.आभोग – यह आलाप का अन्तिम भाग होता है। इसमें तार–सप्तक के स्वरों का जहॉ तक सम्भव हो, प्रयोग करते हैं। इस विभाग में आलाप की गति द्रुत कर दी जाती है, जिसमें गमक का प्रयोग बहुत सुन्दर लगता हैं। गायक त, न, न, आदि शब्दों में तथा वादक झाला द्वारा विभिन्न लयकारियों को प्रस्तुत करता है।

3.3.4 राग – स्वरों तथा वर्णों की वह अनुपम रचना, जिसे सुनकर आनन्द की प्राप्ति हो, राग कहलाती है। विद्वानों ने राग की परिभाषा इस प्रकार दी है :–

योऽसौ ध्वनि विशेषस्तु स्वरवर्ण विभूषितः।

रंजको जनचित्तानां स च रागः उदाहृतः। मतंग– बृहद्देशी, श्लोक 264।

अर्थात ''ध्वनि की वह विशेष रचना जिसको स्वरों तथा वर्णों द्वारा विभूषित किया गया हो और सुनने वालों के चित्त को मोह ले, राग कहलाती है।'' राग से विभिन्न रसों की अनुभूति होती है।

इसलिए राग की परिभाषा में कहा गया है 'रसात्मक राग'। इस रसानुभुति से ही सुनने वालो को आनन्दानुभुति होती है।

प्राचीनकाल में राग के 10 लक्षण अथवा नियम माने जाते थे। इसलिए प्रत्येक राग को उन नियमों के अनुसार गाना पड़ता था तथा नियमों के विरूद्ध राग अशुद्ध माना जाता था। राग के प्राचीन 10 लक्षण अथवा नियम इस प्रकार हैं – ग्रह, अंश, न्यास, अपन्यास, औड़व, षाड़व, अल्पत्व, बहुत्व, मन्द्र और तार। इनमें से कुछ नियमों का जैसे – ग्रह, न्यास या अपन्यास का प्रचार आधुनिक समय में नहीं है। बाकी नियम आजकल भी प्रचलित हैं।

आधुनिक समय में राग के निम्नलिखित नियम या लक्षण माने जाते हैं :–

1. राग को किसी थाट से उत्पन्न होना चाहिए।
2. राग में कम से कम 5 स्वर होने आवश्यक है।
3. राग में आरोह तथा अवरोह दोनों आवश्यक है।
4. राग में वादी–संवादी स्वरों का होना आवश्यक है।
5. राग में रंजकता का होना आवश्यक है। राग की परिभाषा में दिया गया *'रंजको जन चिताना'* अर्थात रंजकता होने से ही सुनने वाले मुग्ध हो सकेंगे।
6. राग में कभी षड़ज स्वर वर्जित नहीं हो सकता। षड़ज स्वर को आधार स्वर माना जाता है।
7. राग में किसी रस की अभिव्यक्ति होनी चाहिए।

राग की जातियां – राग नियमों के अनुसार किसी राग में कम से कम 5 और अधिक से अधिक 7 स्वर हो सकते हैं। रागों में लगने वाले स्वरों की भिन्न–भिन्न संख्याओं के कारण रागों को अलग–अलग तीन विभागों में बॉटा गया है। इन्ही को जातियां कहते हैं।

1. **सम्पूर्ण** – जिस राग में सातों स्वर लगे उसे सम्पूर्ण जाति का राग कहते हैं। जैसे – राग **बिलावल**
2. **षाड़व** – जिस राग में केवल 6 स्वर लगे उसे षाड़व जाति का राग कहते हैं। जैसे – राग **मारवा**
3. **औड़व** – जिस राग में केवल 5 स्वर लगे उसे औड़व जाति का राग कहते हैं। जैसे – राग **भूपाली**

परन्तु जैसा कि राग लक्षणों में आपने जाना कि राग में आरोह तथा अवरोह दोनों होने चाहिए, आरोह तथा अवरोह दोनों स्वरों की संख्या एक न हो तथा कम या अधिक हो, जैसे राग **खमाज** है। इसके आरोह में 'रे' वर्जित होने से 6 स्वर लगते हैं परन्तु अवरोह में 7 स्वर लगते हैं इसलिए आरोह–अवरोह का ध्यान रखते हुए तीन जातियों में से प्रत्येक को तीन–तीन उपजातियों में बांटा गया है जो इस प्रकार है :–

सम्पूर्ण	**षाड़व**	**औड़व**
सम्पूर्ण – सम्पूर्ण	षाडव – सम्पूर्ण	औड़व – सम्पूर्ण
सम्पूर्ण – षाड़व	षाड़व – षाड़व	औड़व – षाड़व
सम्पूर्ण – औड़व	षाड़व – औड़व	औड़व – औड़व

इस तरह कुल मिलाकर 9 जातियां होती हैं, जिनके अन्तर्गत प्रत्येक हिन्दुस्तानी राग रखा जा सकता है। ये जातियां उसके स्वरों की संख्या के साथ इस प्रकार है :–

1. सम्पूर्ण – सम्पूर्ण – आरोह में 7 स्वरअवरोह में भी 7 स्वर
2. सम्पूर्ण – षाड़व – आरोह में 7 स्वरअवरोह में 6 स्वर
3. सम्पूर्ण – औड़व – आरोह में 7 स्वरअवरोह में 5 स्वर
4. षाड़व – सम्पूर्ण – आरोह में 6 स्वरअवरोह में 7 स्वर
5. षाड़व – षाड़व – आरोह में 6 स्वरअवरोह में भी 6 स्वर
6. षाड़व – औड़व – आरोह में 6 स्वरअवरोह में 5 स्वर

7. औड़व – सम्पूर्ण – आरोह में 5 स्वरअवरोह में 7 स्वर
8. औड़व – षाड़व – आरोह में 5 स्वरअवरोह में 6 स्वर
9. औड़व – औड़व – आरोह में 5 स्वरअवरोह में भी 5 स्वर

3.3.5 सप्तक – सात स्वरों के समूह को जब एक क्रम में कहा जाता है अथवा लिखा जाता है, तब उसे सप्तक कहते हैं। संक्षेप में हम कह सकते हैं कि सप्तक में सातों स्वर क्रमानुसार होते हैं। उदाहरण के लिए – सा, रे, ग, म, प, ध, नी यह एक सप्तक हैं। सप्तक में यह ध्यान रखा जाता है कि सातों स्वर एक दूसरे के बाद आऐं। एक सप्तक 'सा' स्वर से 'नि' स्वर तक होता है। अब इस 'नि' के बाद 'सा' आता है जो पहले सा से दुगुना ऊँचा होता है। इस रूप में दूसरा नया सप्तक प्रारम्भ होता है। इस नये सप्तक के सभी स्वर पहले सप्तक के स्वरों से दुगुने ऊँचे होते हैं।

इस प्रकार एक के बाद एक न जाने कितने सप्तक हो सकते हैं, परन्तु विद्वानों ने केवल तीन सप्तक माने हैं। कारण यह है कि साधारणतः मनुष्य की आवाज निम्न तीन सप्तकों के मध्य ही रहती है। केवल कुछ वाद्यों में इन तीनों सप्तकों के अतिरिक्त कुछ ऊपर तथा नीचे स्वर रहते हैं। मुख्य तीन सप्तक हैं :–

1. **मन्द्र सप्तक –** साधारण आवाज से दुगुनी नीची आवाज को मन्द्र सप्तक की आवाज कहते हैं। साधारण आवाज वह है जिसे बोलने अथवा जिन स्वरों को गाने में हमारे गले पर कोई जोर नहीं पड़ता। इससे दुगुनी नीची आवाज जिसमें स्वर लगाने से हृदय पर जोर पड़ता है, मन्द्र सप्तक की आवाज कहलाती है।
2. **मध्य सप्तक –** मध्य का अर्थ है बीच का। वह आवाज जो ना तो अधिक नीची होती है और न ही अधिक ऊँची, अर्थात् बीच की आवाज मध्य सप्तक की आवाज कहलाती है।
3. **तार सप्तक –** मध्य सप्तक से दुगुनी ऊँची आवाज को तार सप्तक की आवाज कहते हैं। इस सप्तक के स्वरों को गाने से हमारे तालु तथा मस्तिष्क पर प्रभाव पड़ता है।

3.3.6 ताल – विभिन्न मात्राओं के समूह को ताल कहते हैं। संगीत में केवल मात्रा से काम पूरा नहीं होता है। क्योंकि मात्राएं केवल समय की गति का बोध कराती है। अतः मात्राओं को नापने के लिए ताल बनाए गए। स्वर और लय, संगीत रूपी भवन के दो स्तम्भ हैं। किसी एक की अनुपस्थिति में यह भवन अधूरा रहता है। लय से मात्रा और मात्रा से ताल बने। जैसे *झपताल, एकताल, चारताल, रूपक, तीनताल* आदि।

विभिन्न तालों की रचना गीत के प्रकारों के आधार पर हुई है। जैसे ख्याल के लिए तीनताल, एकताल, झपताल, तिलवाड़ा आदि; ठुमरी के लिए दीपचन्दी तथा जतताल; ध्रुपद के लिए चारताल, सूलताल, ब्रहमताल आदि व धमार (होली) के लिए धमार ताल बनाया गया। ताल देने के लिए मुख्यतः तबला और पखावज का प्रयोग किया जाता है। ताल को हस्त क्रियाओं से भी प्रदर्शित कर सकते हैं। प्रत्येक ताल के कुछ निश्चित बोल होते हैं, जो तबले अथवा पखावज पर बजाये जाते हैं। बोल धा, ना, धी, किट, तक, गदि गन, तिरकिट आदि वर्णों से निर्मित होते हैं।

ताल की परिभाषाएं :

- कुछ निश्चित मात्राओं के उस समूह को ताल कहते हैं जो धा, ना, धी, धिं, किट, तक, गदि, गन, तिरकिट आदि वर्णों से निर्मित होते हैं, और जो तबला–पखावज आदि वाद्यों पर बजाए जाते हैं।
- आचार्य शारंगदेव के अनुसार :

  तालस्तल प्रतिष्ठायाम् इति धार्तोधञि स्मृतः।
  गीतं वाद्यं तथा नृत्यं यतस्ताले प्रतिष्ठितम्।।

अर्थात गीत, वाद्य एवं नृत्य की प्रतिष्ठा ताल से हुई है तथा प्रतिष्ठा वाचक धातु रुप *तल* से ताल की उत्पत्ति हुई है।

- भरत मुनि के अनुसार – ***"संगीत में गायन व वादन की लंबाई नापने का साधन, ताल है"***।
  "ताल का मुख्य उद्देश्य संगीत में लय कायम करना है"।

3.3.7 लय – समय की समान गति को लय कहते हैं। संगीत में प्रयोग की जाने वाली गति को *'लय'* कहते है। ताल में एक क्रिया और दूसरी क्रिया के बीच की विश्रांति का काल, जो पहली क्रिया का विस्तार है, *'लय'* कहलाता है। गायन, वादन तथा नृत्य में कोई न कोई लय अवश्य होती है।

लय की परिभाषाएं :

- संगीत रत्नाकर के अनुसार – **'क्रियानान्तर विश्रांति लयः'** अर्थात क्रिया के अन्त में विश्रांति को लय कहते हैं।
- अमरकोश के अनुसार – **'क्रिया विश्रांति लयः'** अर्थात दो क्रियाओं के बीच के अन्तराल को लय कहते हैं।

यूं तो लय के अनगिनत प्रकार हैं, परन्तु लय को प्रधानतः तीन लयों में बांटा गया है :–

1. **विलम्बित लय** – जिस लय की चाल बहुत धीमी होती है उसे विलम्बित लय कहते हैं। जैसे – गायन विधा में बड़ा ख्याल, ध्रुपद, धमार तथा तंत्र वाद्य में मसीतखानी गत आदि।
2. **मध्य लय** – जो लय न ज्यादा धीमी और न ही द्रुत हो, अर्थात साधारण लय को 'मध्य लय' कहते हैं। जैसे – गायन विधा में छोटा ख्याल, भजन, ठुमरी तथा तंत्रवाद्य में रज़ाखानी गत और अधिकतर नृत्य में मध्य लय रहती है।
3. **द्रुत लय** – जिसकी गति बहुत तेज हो अर्थात द्रुत हो उसे द्रुत लय कहते हैं। यह लय मध्यलय से दुगुनी तथा विलम्बित लय से चौगुनी होती है। जैसे – गायन विधा में तराना, तंत्रवाद्यों में झाला तथा नृत्य में ततकार में द्रुत लय होती हैं।

इन लयों के बीच कोई निश्चित रेखा निर्धारित नहीं की जा सकती, इन्हे सापेक्षिक माना जाना चाहिए।

3.3.8 आवर्तन – किसी भी ताल के ठेके को पूरा एक बार बजाने से एक आवृति पूरी होती है, इसी को आवर्तन कहते हैं। इस प्रकार जितनी बार पूरे ठेके को बजाऐंगे उतने ही आवर्तन पूरे होंगे। उदाहरण के लिए तीनताल का एक आवर्तन :

धा	धिं	धिं	धा	।	धा	धिं	धिं	धा	।	धा	तिं	तिं	ता	।	ता	धिं	धिं	धा	।	धा
×						2					0					3				×

3.3.9 ताली – सम एवं अन्य विभागों की प्रथम मात्रा पर खाली के अतिरिक्त जहॉ हाथ से आघात द्वारा ध्वनि उत्पन्न करते हैं, उसे ताली कहते हैं। जैसे तीनताल में *1, 5 व 13* पर।

3.3.10 खाली – विभाग की प्रथम मात्रा में जहॉ ध्वनि न करके केवल हाथ बांई या दांई ओर झुका दिया जाता है उसे खाली कहते हैं। इसको 0 से प्रदर्शित करते है। जैसे पंचमसवारी में 8 वीं पर।

3.3.11 विभाग – प्रत्येक ताल अथवा तालबद्ध रचना कुछ छोटे–छोटे भागों में विभाजित होती है, जिन्हे विभाग कहते हैं। प्रत्येक ताल के विभागों की संख्या निश्चित होती है, क्योंकि किसी ताल के बोल के जितने भाग स्वाभाविक ढ़ंग से हो सकते हैं, उतने ही विभाग माने गए। **उदाहरण :** झपताल के ठेके को बोलते समय उसके चार हिस्से स्वतः बन जाते हैं।

1. धी ना
2. धी धी ना
3. ती ना
4. धी धी ना

प्रत्येक विभाग अधिकतर दो, तीन, चार, अथवा पॉच मात्राओं का होता है। विभाग का उद्देश्य यह है कि गायक अथवा वादक को हाथ से ताल देने से यह पता चलता रहे कि वह ताल की किस मात्रा पर है।

3.3.12 ठेका – प्रत्येक ताल के कुछ निश्चित बोल होते है, जिसे ठेका कहते हैं।
उदाहरण : दादरा ताल का ठेका – **धा धी ना । धा तू ना**
झपताल का ठेका – **धी ना । धी धी ना। ती ना। धी धी ना**

ताल की मात्रा, चलन, विभाग आदि में परिवर्तन ना करते हुए किसी ताल के ठेके को विभिन्न प्रकार से बजाने को ठेके की किस्म कहते हैं।
जैसे – **धा धी नाना । धा तू नाना** बजाने से दादरा ताल की एक किस्म होगी।

अभ्यास प्रश्न

(अ) रिक्त स्थानों की पूर्ति :

1. एक सप्तक में कुल———————— श्रुतियां होती हैं।
2. जब स्वर अपने निश्चित स्थान पर होते हैं तो———————— कहलाते हैं।
3. राग की कुल———————— जातियां होती हैं।
4. सप्तक में ———————— स्वर होते हैं।
5. समान गति को———————— कहते हैं।

(ब) वस्तुनिष्ठ प्रश्न :

1. 'श्रुयते इति श्रुतिः किसकी परिभाषा है ?
   क) नाद ख) आलाप ग) स्वर घ) श्रुति
2. स्वर के कितने प्रकार हैं ?
   क)पॉच ख) दो ग) तीन घ) चार
3. राग नियमों के आधार पर किसी राग में कम से कम और अधिक से अधिक कितने स्वर होने चाहिए ?
   क)5, 7 ख) 3, 5 ग) 2, 7 घ) 4, 5
4. विभिन्न मात्राओं के समूह को क्या कहते हैं ?
   क)लय ख) विभाग ग) ताल घ) आवर्तन
5. किसी ताल के ठेके को पूरा एक बार बजाने को क्या कहते हैं ?
   क) ठेका ख) लयकारी ग) विभाग घ) आवर्तन

(स) लघु उत्तरीय प्रश्न :

1. श्रुति को परिभाषित करें।
2. राग की व्याख्या कीजिए।
3. लय से आप क्या समझते हैं?

3.4 सारांश

इस इकाई को पढ़ने के उपरान्त आप संगीत, गायन तथा वादन में प्रयोग होने वाले शब्दों की परिभाषा व अर्थ को जान चुके होंगे। गायन के अन्तर्गत प्रयोग होने वाले स्वर, श्रुति, आलाप, सप्तक, इत्यादि के महत्व को जान चुके होंगे। इसके अतिरिक्त इन मूलभूत शब्दों जैसे – श्रुति, स्वर, ताली, खाली, आलाप, राग इत्यादि का अन्तर समझ कर गायन व वादन में उचित प्रयोग कर सकेंगे।

3.5 शब्दावली

1. संगीतोपयोगी	–	संगीत के लिए उपयुक्त
2. कृति	–	रचना
3. श्रोत्रचिन्त	–	सुनने वाले का हृदय
4. संवेदना	–	भावानुभूति
5. आन्दोलन	–	कम्पन
6. वर्ण	–	गाने की किया
7. रंजकता	–	मधुरता।
8. ताल रहित	–	बिना ताल के
9. विभूषित	–	सजाना

3.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

(अ) रिक्त स्थानों की पूर्ति :

1. 22 **2.** शुद्ध स्वर **3.** 9 **4.** 7 **5.** लय

(ब) वस्तुनिष्ठ प्रश्न :

1. (घ) श्रुति **2.** (ख) दो (शुद्ध, विकृत) **3.** (क) 5, 7
4. (ग) ताल **5.** (घ) आवर्तन

3.7 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. श्रीवास्तव, श्री हरीश चन्द्र, *राग परिचय भाग 1 व 2*, संगीत सदन प्रकाशन, इलाहाबाद।
2. वसन्त, *संगीत विशारद*, संगीत कार्यालय, हाथरस।
3. परांजपे, श्रीधर, *संगीत बोध*।
4. गोवर्धन, श्रीमती शान्ति, *संगीत शास्त्र दर्पण*।

3.8 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. *संगीत* मसिक पत्रिका, संगीत कार्यालय, हाथरस।
2. चौधरी, डा0 सुभाष रानी, *संगीत के प्रमुख शास्त्रीय सिद्धान्त,* कनिष्का पब्लिशर्स, नई दिल्ली।
3. बंसल, डॉ0 परमानन्द, *संगीत सागरिका,* प्रासंगिक पब्लिशर्स, नई दिल्ली।

3.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. राग तथा आलाप की परिभाषा को विस्तार से समझाइए।
2. श्रुति तथा स्वर को समझाइए।
3. ताल एवं लय का सविस्तार वर्णन कीजिए।

इकाई 1 – ख्याल की उत्पत्ति, विकास एवं घरानों का संक्षिप्त परिचय; तानपुरे की संरचना एवं मिलाने की विधि

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 ख्याल गायन शैली
  1.3.1 ख्याल गायन का स्वरूप
  1.3.2 ख्याल गायन की उत्पत्ति एवं विकास
1.4 घराना : अर्थ एवं परिभाषा
1.5 ख्याल गायकी के घराने
  1.5.1 ग्वालियर घराना एवं गायन शैली
  1.5.2 आगरा घराना एवं गायन शैली
  1.5.3 किराना घराना एवं गायन शैली
  1.5.4 दिल्ली घराना एवं गायन शैली
  1.5.5 पटियाला घराना एवं गायन शैली
  1.5.6 रामपुर घराना एवं गायन शैली
  1.5.7 जयपुर घराना एवं गायन शैली
  1.5.8 इन्दौर घराना एवं गायन शैली
  1.5.9 खुर्जा घराना एवं गायन शैली
  1.5.10 कव्वाल बच्चों का घराना एवं गायन शैली
1.6 तानपुरा वाद्य
  1.6.1 तानपुरा की उत्पत्ति एवं विकास
  1.6.2 तानपुरे के अंग
  1.6.3 तानपुरा और सहायक नाद
  1.6.4 तानपुरे को मिलाने की विधि
  1.6.5 तानपुरे के प्रकार एवं वादन विधि
1.7 सारांश
1.8 शब्दावली
1.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
1.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
1.11 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
1.12 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0 संगीत के पाठ्यक्रम (बी0ए0एम0वी0–101) के द्वितीय खण्ड की पहली इकाई है। इससे पहले की इकाईयों के अध्ययन के बाद आप बता सकते हैं कि संगीत किसे कहते हैं ? आप भारतीय संगीत के इतिहास व संगीत की विधाओं से सम्बन्धित मूलभूत परिभाषाओं से भी परिचित हो चुके होंगे। आप यह भी बता सकते हैं कि शास्त्रीय संगीत के मूल रूप में आज रागदारी संगीत का चलन है।

प्रस्तुत इकाई में ख्याल गायन शैली के स्वरूप, उत्पत्ति एवं विकास की चर्चा की गई है। हिन्दुस्तान में ख्याल गायन के अन्तर्गत अनेक घरानों का प्रचलन है जिनकी गायन शैली की अपनी अलग–अलग विशेषताएँ हैं। प्रस्तुत इकाई में घराना का अर्थ एवं ख्याल शैली के विभिन्न घरानों के विषय में चर्चा की गई है। साथ में शास्त्रीय संगीत में संगत हेतु प्रयुक्त सबसे महत्वपूर्ण वाद्य 'तानपुरा' के विषय में भी इस इकाई में बताया गया है। तानपुरे की पूर्ण संरचना एवं वादन विधि का वर्णन भी इसमें प्रस्तुत है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप ख्याल गायन शैली के वर्तमान स्वरूप को समझा सकेंगे, साथ ही 'ख्याल' के विभिन्न घरानों की गायन शैली का विश्लेषण कर सकेंगे। भारतीय शास्त्रीय संगीत के सबसे प्रमुख संगत वाद्य तानपुरे की संरचना एवं उसकी वादन विधि को भी इस इकाई के अध्ययन के पश्चात समझ सकेंगे।

1.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात आप :–

- बता सकेंगे कि ख्याल गायन शैली की उत्पत्ति किस प्रकार हुई तथा वर्तमान में यह किस प्रकार शास्त्रीय संगीत की लोकप्रियता को बढ़ा रही है।
- ख्याल गायन के विभिन्न घरानों की गायन विशेषताओं को समझ कर श्रेणीबद्ध कर सकेंगे।
- शास्त्रीय संगीत में प्रयुक्त सबसे महत्वपूर्ण संगत वाद्य तानपुरे की संरचना व वादन विधि को भी समझ सकेंगे।

1.3 ख्याल गायन शैली

'ख्याल' अरबी भाषा का शब्द है जिसका अर्थ है कल्पना या विचार। इस प्रकार कहा जा सकता है कि जहॉ कल्पना या विचार के माध्यम से एक विशिष्ट गायन शैली का स्वरूप निर्मित होता है वही ख्याल है। वर्तमान समय में हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत के अन्तर्गत ख्याल गायन सबसे महत्वपूर्ण एवं लोकप्रिय है। यह इस प्रकार भारतीय संगीत में घुल–मिल गया है कि शास्त्रीय संगीत की कल्पना इसके बिना नहीं की जा सकती है।

1.3.1 ख्याल गायन का स्वरूप – गायन शैली एवं गीत रचना की दृष्टि से ख्याल गायन का अपना विशिष्ट स्थान है। इसमें गीत मात्र दो या तीन पंक्तियों का होता है परन्तु इसमें विशेष बात यह है कि गायक अपनी कल्पना एवं सृजनशीलता से उसे विभिन्न स्वर समूहों द्वारा बहुत समय तक सजाता रहता है तथा गीत का नवनवीन सौन्दर्य निरन्तर बना रहता है। प्रत्येक कलाकार अपनी प्रतिभा के आधार पर एक ही राग एवं गीत रचना के अलग–अलग रूप दिखाता है। गायक में जितनी अधिक कल्पना करने की योग्यता होगी वह उतने अधिक समय तक गीत को विभिन्न अलंकारों, स्वर विन्यास, शब्द सौन्दर्य आदि से अलंकृत कर सकता है।

संगीत की किसी भी विधा में चाहे वह शास्त्रीय संगीत हो या उपशास्त्रीय संगीत, सुगम या फिल्मी सगीत, सभी में कल्पना, भावना, ध्यान अनुमान आदि शब्दों का महत्वपूर्ण स्थान है। जब कोई गायक गाता है या वादक बजाता है तब उसके संगीत में उसका अपनत्व एवं अनुभव सम्मिलित हो जाता है। जिससे हमें कला के जीवन्त दर्शन होते हैं। इसके लिए महत्वपूर्ण है कि कलाकार में कल्पना शक्ति एवं सृजनशीलता की शक्ति होनी चाहिए। साथ ही कलाकार में भावनापूर्ण हृदय व एकाग्रचित्त होने की क्षमता भी होनी चाहिए। ख्याल गायन में इन सभी महत्वपूर्ण बातों का ध्यान रखा जाता है। कल्पना से ही ख्याल का सम्बन्ध बताते हुए श्री ओ0 गोस्वामी का कथन है कि, *"कल्पना शब्द ख्याल शैली में बहुत महत्व रखता है। नई–नई कल्पनाएँ न सूझने पर या नए स्वर समुदाय या स्वर संयोजना न करने पर गायन यांत्रिक रह जाता है।"* स्वर के लगाव पर राग का आकर्षण केन्द्रित रहता है। केवल गणित का आधार लेकर तान, आलाप, बोलतान आदि के गायन से ही ख्याल गायकी नहीं बनती। अपनी कल्पना के सहारे, राग के विभिन्न अंगों को कलात्मकता से प्रस्तुत किया जा सके तभी कल्पना और भावना मिलकर श्रोताओं व स्वयं गायक को भी आनन्द की अनुभूति कराते हैं। ख्याल गायन में निर्धारित गीत रचनाओं के दो चरण होते हैं।

1. स्थाई 2. अन्तरा

ख्याल दो प्रकार के होते हैं – 1. विलम्बित ख्याल 2. द्रुत ख्याल। जिन ख्याल को विलम्बित लय अथवा धीमी लय में बाँधा व गाया जाता है वह *विलम्बित ख्याल/ बड़ा ख्याल* कहलाते हैं। मध्य लय एवं द्रुत लय में जो ख्याल बाँधें व गाए जाते हैं उन्हें *द्रुत/ छोटा* ख्याल

कहते हैं। ख्याल गायन में शब्दों का महत्व उतना अधिक नहीं है जितना कि स्वरों के सौन्दर्य का है। यह स्वर प्रधान गायकी है। ख्याल गायन में प्रारम्भ में राग के मुख्य स्वर समुदायों को आलाप द्वारा प्रकट किया जाता है। तत्पश्चात ख्याल की बंदिश प्रस्तुत की जाती है। बंदिश में स्वर समुदायों एवं बोलों पर आधारित 'आलाप' कर ख्याल को आगे विस्तारित किया जाता है। अंत में द्रुत गति से सरगम एवं बोलों को लेकर 'तान' गाई जाती है। 'तान' ख्याल गायन में विशेष आकर्षण एवं चमत्कार पैदा करती है। गायक, राग के अनुकूल विभिन्न स्वर अंलकारों, गमक, खटका, बोल आलाप, बोलतान, मींड, सरगम आदि से ख्याल गायन को सजीव एवं सप्राण बना देता है।

विलम्बित ख्याल की लय धीमी होती है। यह अधिकतर एकताल, झूमरा ताल, तिलवाड़ा आदि में गाया जाता है। मध्यलय के ख्याल की लय विलम्बित से तेज रहती है। इसे अधिकतर एकताल, झपताल, आड़ाचौताल, तीनताल आदि में गाया जाता है। द्रुत ख्याल की गति द्रुत रहती है। इसमें अधिकतर तीनताल का प्रयोग होता है। वर्तमान में छोटे ख्याल में एकताल व अन्य तालें भी अधिक प्रयोग होने लगी है।

1.3.2 ख्याल गायन की उत्पत्ति एवं विकास – ख्याल गायन के उद्‌गम के विषय में कई मत प्रचलित हैं। ऐसा माना जाता है कि छन्द, प्रबन्ध तथा मध्यकाल के ध्रुपद व कव्वाली आदि गायन शैलियों के प्रभाव से ख्याल की उत्पत्ति हुई। एक मत है कि 14 ई0 के अमीर खुसरो ने ख्याल का आविष्कार किया। कुछ विद्वानों का कहना है कि ख्याल की उत्पत्ति ध्रुपद से हुई। कुछ का कहना है कि कव्वाली से इसकी उत्पत्ति हुई। एक महत्वपूर्ण मत यह है कि मध्यकालीन संगीत में प्रबन्ध एवं रूपक प्रचलित थे। प्रबन्ध से ध्रुपद की रचना हुई क्योंकि प्रबन्ध में नियम तथा बन्धन अधिक थे तथा साहित्य अंग पर विशेष ध्यान दिया जाता था। इसके साथ 'रूपक' में भावों को प्रकट करना ही विशेष अर्थ रखता था। भावों को प्रकट करने के लिए गायक जो भी स्वर संयोजन एवं लय आदि प्रयुक्त करना चाहता था, अपनी कल्पना के आधार पर भावों के अनुसार प्रयुक्त कर सकता था। यही शैली आगे ख्याल के रूप में सामने आई। रूपक एक ऐसा प्रबन्ध था, जिसमें किसी एक राग के अन्तर्गत नवीन स्वरों की योजना पर नवीन राग रूप बनाया जाता था। कुछ विद्वानों का मत यह भी है कि प्राचीन 'साधारणी' एवं भिन्ना नामक गीतियों से ख्याल शैली का विकास हुआ परन्तु प्राचीन इन गीतियों का लोप तानसेन के समय तक हो चुका था। इसलिए इतनी प्राचीन गीत शैलियों से ख्याल का सम्बन्ध स्थापित करना उचित प्रतीत नहीं होता। एक ओर अमीर खुसरों की जहॉ तक बात है उनके ग्रन्थों में 'कव्वाली' तथा 'गजल' का स्पष्ट उल्लेख प्राप्त होता है, ख्याल का उल्लेख कहीं नहीं मिलता है। तानसेन के समय में 'ख्याल' लोक संगीत के अन्तर्गत गाए जाते थे। आज भी राजस्थान तथा ब्रज के कुछ प्रदेशों में 'ख्याल' नामक लोकगीतों की परम्परा प्राप्त होती है।

18वीं ई0 के सुल्तान मुहम्मद शाह रंगीले के दरबारी गायक नियामत खाँ (सदारंग) ने ख्याल गायन को विशेष रूप से प्रतिष्ठा दिलाई। उनकी ख्याल की रचनाएॅ पीढ़ी दर पीढ़ी प्रचलित रही हैं। सदारंग तानसेन के वंशज थे। युग परिवर्तन के आधार पर आपने ख्याल गीतों का प्रवर्तन किया, जिसमें स्वर सौन्दर्य के लिए पर्याप्त स्थान था। ध्रुपद की लयकारिता एवं कव्वाली की तान, इन दोनों के सम्मिश्रण से ख्याल गायकी का निर्माण हुआ। कव्वाली से सम्बन्धित होने के कारण अनेक कव्वालों ने इस ख्याल शैली को अपनाया। ग्वालियर घराने के प्रवर्तक नत्थन पीर बख्श मुख्यतः कव्वाल बच्चों के वंशज थे।

अभ्यास प्रश्न

1) लघु उत्तरीय प्रश्न :

(i) ख्याल गायन का संक्षेप में विवरण दें।

(ii) ख्याल के कितने प्रकार होते हैं?

(iii) ख्याल गायन में किन तालों का विशेष रूप से प्रयोग होता है?

2) एक शब्द में उत्तर दीजिए :

(i) धीमी लय में कौन सा ख्याल गाया जाता है?

1.4 घराना : अर्थ एवं परिभाषा

वर्तमान समय में ख्याल गायन शैली शास्त्रीय संगीत की सर्वाधिक लोकप्रिय एवं जानी मानी शैली है। विगत 2 शताब्दियों में ख्याल गायन के क्षेत्र में पर्याप्त परिवर्तन एवं परिष्कार हुए। ख्याल गायन में विभिन्न घरानों का निर्माण हुआ। ख्याल शैली का घरानों के माध्यम से ही सम्पूर्ण विकास हुआ। ख्याल में, घरानों के विषय में समझने से पूर्व 'घराना' शब्द का अर्थ एवं तात्पर्य समझ लेते हैं।

साधारण भाषा में 'घराना' शब्द के अनेक अर्थ हैं जैसे– घर, कुटुम्ब, परिवार, वंश परम्परा आदि। शास्त्रीय संगीत के क्षेत्र में 'घराना' शब्द इन्हीं अर्थों से सम्बन्धित है। प्रसिद्ध संगीतज्ञ कृष्णराव शंकर पंडित के अनुसार, *"शताब्दियों या बहुत वर्षों की परम्परा, उच्चकोटि के गुरू तथा कई पीढ़ियों की गुरू शिष्य परम्परा, सब मिलकर एक घराना बनता है।"* एक गायक अपनी गायकी में स्वतंत्र प्रतिभा से कुछ विशेषताएँ ले आता है तथा उस गायकी का अनुकरण उसकी शिष्य परम्परा करने लगती है। इस प्रकार कम से कम तीन पीढ़ियों तक गायकी की यह परम्परा चलने पर वह एक घराने का नाम ले लेती है। साधारणतया यह नाम या तो उस मुख्य गायक के नाम पर होता है या फिर अधिकतर उसके निवास स्थान के नाम पर रख दिया जाता है। निष्कर्ष यह है कि गुरू शिष्य परम्परा के अन्तर्गत एक ही ढंग की गायकी गाने वाली वंश परम्परा के गायकों का, एक विशिष्ट घराना बन जाता है। उत्तर भारतीय संगीत में घराने का बहुत बड़ा योगदान है। घरानों के कारण ही उत्तर भारतीय संगीत जगत में विभिन्न गायन, वादन तथा नृत्य शैलियाँ विकसित हो पाई हैं। चूंकि हर घराने की गायन शैली की अपनी विशेषताएँ होती हैं। इसीलिए हमें विभिन्न प्रकार के विशिष्ट संगीत का रस प्राप्त होता है। वर्तमान समय में, ख्याल गायन में सर्वाधिक घरानों का विकास हो चुका है।

अभ्यास प्रश्न

1) लघु उत्तरीय प्रश्न :

(i) घराना की परिभाषा दीजिए।

2) एक शब्द में उत्तर दीजिए :

(i) कम से कम कितनी पीढ़ी में एक घराना बनता है?

1.5 ख्याल गायकी के घराने

भारतीय शास्त्रीय संगीत को जीवित रखने में जिन महान कलाकारों का योगदान है वे हैं – गोपाल नायक, बैजू बावरा, तानसेन, स्वामी हरिदास, सदारंग, अदारंग, तानरस खाँ, उस्ताद फैयाज खाँ आदि। इन सब के अतिरिक्त पं0 विष्णु नारायण भातखंडे व पं0 विष्णु दिगम्बर पलुस्कर ने आधुनिक समय तक प्राचीन संगीत को जीवित रखने का प्रयत्न 'शास्त्र' के रूप में, उसे सुरक्षित कर, सफलतापूर्वक किया है। विभिन्न विद्वान संगीतज्ञों ने नवीन गायन शैली को जन्म देकर नई परम्पराओं को जन्म दिया जिससे संगीत जगत में अनेक घरानों का जन्म हुआ। ख्याल गायन शैली में मुख्यतः घराने हैं – **1.** ग्वालियर घराना **2.** आगरा घराना **3.** किराना घराना **4.** दिल्ली घराना **5.** पटियाला घराना **6.** रामपुर घराना **7.** जयपुर या अल्लादिया घराना **8.** इन्दौर घराना **9.** खुर्जा घराना **10.** कव्वाल बच्चों का घराना

1.5.1 ग्वालियर घराना एवं गायन शैली – ग्वालियर घराना सबसे प्राचीन घराना माना गया है। लखनऊ दरबार के ध्रुपद गायक गुलाम रसूल लखनऊ से दिल्ली आ गए तथा उन्होंने ख्याल गायन प्रारम्भ कर दिया। उन्होंने अपने दोनों भांजों शक्कर खाँ तथा मक्खन खाँ को ख्याल गायकी की तालीम दी। शक्कर खाँ द्वारा अपने पुत्र मुहम्मद खाँ को गायकी की शिक्षा दी गई। मुहम्मद खाँ बाद में ग्वालियर बस गए तथा वहीं इन्होंने इस घराने की नींव डाली। कुछ विद्वानों का मत है कि ग्वालियर में ख्याल गायकी का आरम्भ हस्सू–हद्दू खाँ द्वारा हुआ। मक्खन खाँ के दो पुत्र कादर बख्श और पीर बख्श थे। कादर बख्श के तीन पुत्र – हस्सू खाँ, हद्दू खाँ और नत्थू खाँ थे। नत्थू खाँ को उनके चाचा पीर बख्श ने गोद ले लिया था। कादर बख्श की मृत्यु के पश्चात हस्सू–हद्दू खाँ को भी पीर बख्श द्वारा ही संगीत शिक्षा प्राप्त हुई। ये ग्वालियर दरबार में गायक थे। ग्वालियर में यह ख्याल गायकी का स्वर्ण युग था। हस्सू खाँ के शिष्यों में बन्ने खाँ, वासुदेव राव जोशी, नाना दीक्षित आदि प्रसिद्ध गायक हुए। हद्दू खाँ के शिष्यों में रामकृष्ण बुवा, पंडित दीक्षित थे। नत्थू खाँ के शिष्य निसार हुसैन खाँ ग्वालियर घराने के प्रसिद्ध गायक थे। ग्वालियर घराने के अन्य प्रसिद्ध गायकों में बालकृष्ण बुवा इचलकरंजीकर, अनंत मनोहर जोशी, पं0 मिराशी बुआ, पं0 विष्णु दिगम्बर पलुस्कर, पं0 डी0वी0 पलुस्कर, शंकर राव व्यास, पं0 कशालकर, पं0 ओमकार नाथ ठाकुर, पं0 विनायकराव पटवर्धन, बी0आर0 देवधर, नारायण राव व्यास, शंकर पंडित, राजा भैया पूँछवाले आदि सुप्रसिद्ध गायक थे।

गायन शैली – ग्वालियर घराने की गायकी में मुख्य रूप से जोरदार एवं खुली आवाज का प्रयोग एवं शब्दों का स्पष्ट उच्चारण विशेष है। विलम्बित ख्याल की लय यहाँ कम नहीं रखते हैं। इस घराने की गायकी सीधी, निर्मल व सौन्दर्ययुक्त है। स्वरों का शुद्ध, सीधा व सरल प्रयोग तथा अंलकारिता से बढ़त करना इस गायकी का गुण है। ग्वालियर घराने में विभिन्न प्रकार की तानों का समावेश है। फिरत की तान लेना तथा गले को तीव्रता से तीनों सप्तकों में घुमाना इसकी विशेषता है। तराने, त्रिवट, चतुरंग, अष्टपदी भी इस घराने के गायक भली–भांति गाते हैं।

1.5.2 आगरा घराना एवं गायन शैली – आगरा घराने का प्रारम्भ अलखदास और मलूकदास से बताया जाता है। कहा जाता है कि किसी कारणवश इन्हें मुसलमान धर्म स्वीकार करना पड़ा। अलखदास के पुत्र हाजी सुजान खाँ एक अच्छे ध्रुपद, धमार गायक थे। इस घराने में इन्हें ही सर्वप्रसिद्ध गायक माना जाता है। सुजान खाँ के पोते घग्गे खुदाबख्श द्वारा इस घराने में ख्याल गायकी का पदार्पण हुआ। इन्होंने ख्याल गायन की शिक्षा ग्वालियर के नत्थन पीर बख्श से प्राप्त की। खुदाबख्श ने अपने दो पुत्रों गुलाम अब्बास एवं कल्लन खाँ तथा भतीजे शेर खाँ को संगीत शिक्षा दी। कल्लन खाँ के शिष्यों में खादीम हुसैन खाँ, नन्हे खाँ, विलायत हुसैन खाँ प्रसिद्ध हैं। आगरा घराने के अन्य प्रसिद्ध गायकों में उस्ताद युनूस हुसैन खाँ, उस्ताद फैयाज खाँ, पं0 दिलीप चन्द्र बेदी, पं0 ना0 रातांजनकर, बन्दे अली खाँ, बशीर खाँ, भाष्कर बुवाबखले आदि प्रमुख हैं। ठाकुर जयदेव सिंह कहते है कि *"आगरा घराने के संस्थापक फैयाज खाँ थे। ये ध्रुपद, धमार, ठुमरी, ख्याल सभी शैलियों के गायन में पारंगत थे।"*

गायन शैली – आगरा घराने की ख्याल शैली में ध्रुपद अंग का प्राबल्य होने के कारण नोम–तोम का आलाप इसकी विशेषता है। यहाँ गायकी में बोल–बाँट बहुत अच्छे ढंग से की जाती है। इस घराने में ख्याल को विलम्बित लय से प्रारम्भ कर उसमें चौगुन, अठगुन, आड़ और फिरत आदि करके लयबद्ध तानों और बोलतानों का प्रयोग होता है। एक स्वर समुदाय को भिन्न–भिन्न रूप से प्रयुक्त किया जाना इस घराने की विशेषता है। ख्याल गायन में सरगम का प्रचार भी इस घराने द्वारा प्रचार में लाया गया। इस घराने की गायकी में सरलता, गौरव तथा संयम दिखाई पड़ता है।

1.5.3 किराना घराना एवं गायन शैली – प्रसिद्ध ध्रुपदिए एवं बीनकार गुलाम तक़ी के पोते बन्दे अली खाँ को किराना घराने का प्रवर्तक माना जाता है। किराना घराने को बुलंदियों में पहुँचाने का श्रेय उ0 अब्दुल करीम खाँ व उ0 अब्दुल वहीद खाँ को जाता है। उस्ताद अब्दुल करीम खाँ का निवास स्थान किराना होने के कारण इनका घराना भी किराना नाम से जाना जाने लगा। आप दोनों ने किराना घराने की गायकी को इतना प्रभावशाली बना दिया कि सम्पूर्ण उत्तर भारत में इस

घराने की शिष्य परम्परा का विकास होने लगा। इस घराने के प्रसिद्ध कलाकारों में सवाई गन्धर्व, सुरेश बाबू माने, बहरे बुवा, गंगू बाई हंगल, उ0 रजब अली खाँ, हीराबाई बड़ोदकर, माणिक वर्मा के नाम उल्लेखनीय है। वर्तमान में पंडित भीमसेन जोशी इस घराने के मुख्य कलाकार थे जिनका निधन कुछ समय पहले ही हुआ है।

गायन शैली – इस घराने की गायकी आलाप प्रधान है। आलापचारी में एक–एक सुर की बढ़त की जाती है। स्वरों का सुरीलापन व चैनदारी इस घराने की मुख्य विशेषता है। एक स्वर को महत्व देकर उसके चारों ओर स्वरों का प्रयोग इस गायकी की विशेषता है। सुरीलापन, मींड का प्रयोग विशेष होता है। इस घराने के स्तम्भ अब्दुल करीम खाँ ने मींड़ एवं कण युक्त गायकी को महत्व दिया। विभिन्न स्थानों के गायकों को सुनकर तथा अपनी नुकीली आवाज होने के कारण आपने आलाप प्रधान गायकी को कण व मींड की सहायता से सजाकर अत्यन्त प्रभावशाली रूप में, सूक्ष्म स्थानों को प्रदर्शित करने वाली विशिष्ट गायकी का निर्माण किया।

1.5.4 दिल्ली घराना एवं गायन शैली – ख्याल गायकी का प्राचीन घराना दिल्ली घराना रहा है। इस घराने की स्थापना के सम्बन्ध में दो मत हैं। एक मतानुसार तानरस खाँ ने इस घराने की स्थापना की। दूसरे मतानुसार दिल्ली में मुहम्मद शाह रंगीले के शासन काल में उनके दरबारी गायक मियाँ नियामत खाँ(सदारंग) तथा फिरोज खाँ(अदारंग) ने ख्याल गायन को उन्नति के चरमोत्कर्ष तक पहुँचा दिया। इन्होंने अपने शिष्यों को भी ख्याल की तालीम दी जिससे इनकी परम्परा पीढ़ी दर पीढ़ी चलती रही। इस मत के समर्थक दिल्ली घराने के प्रसिद्ध गायक उस्ताद चाँद खाँ दिल्ली घराने को प्राचीनतम बताते हैं।

तानरस खाँ का असली नाम कुतुबबख्श था। इन्होंने संगीत शिक्षा मियाँ अचपल से प्राप्त की। आपके पुत्र उमराव खाँ ने दिल्ली घराने की परम्परा को आगे बढ़ाया। तानरस खाँ के पौत्र गुलाम गौस खाँ के पुत्र अब्दुल रहीम खाँ तथा इनके भतीजे शब्बू खाँ, अजीज खाँ भी इस घराने के प्रसिद्ध गायक थे। वर्तमान में उस्ताद चाँद खाँ इस घराने के प्रतिनिधि रहे थे। इनके पुत्र उ0 नसीर अहमद खाँ, उ0 हिलाल अहमद खाँ प्रतिष्ठित गायक रहे हैं। उ0 चाँद खाँ की शिष्याएँ विदुषी कृष्णा बिष्ट एवं भारती चक्रवर्ती इस घराने की गायकी को कायम रखे हैं।

गायन शैली – दिल्ली घराने ने गायन के साथ वादन में भी बहुत प्रसिद्धि पाई है। इस घराने के सारंगी वादक भी बहुत प्रसिद्ध हुए हैं। इसी कारण सूत एवं मींड़ का काम अधिक मात्रा में होता है। इस घराने में ख्याल की बंदिशें कलात्मक होती हैं। कलात्मकता का विशेष प्रयोग रहता है। इस घराने में विविध प्रकार की तानें लेने का प्रचार है जैसे झूला की तान, जोड़–तोड़ की तान, फन्दे की तान, उड़ान की तान इत्यादि।

1.5.5 पटियाला घराना एवं गायन शैली – पटियाला घराने को पंजाब घराना भी कहा जाता है। उस्ताद बड़े गुलाम अली खाँ के नाम से यह घराना अधिक चर्चा में आया। बड़े मियाँ कालू खाँ जो प्रसिद्ध सारंगी वादक थे, इनके पुत्र अली बख्श तथा फतेह अली खाँ दोनों ने जो अलियाफत्तू के नाम से प्रसिद्ध थे, इस घराने की गायकी को परिमार्जित किया। दोनों ने अनेक घरानों की गायकी को ग्रहण कर अपनी एक स्वतंत्र गायन शैली का निर्माण किया। यह पटियाला में निवास करते थे इसलिए इनकी गायकी पटियाला घराने की कहलाने लगी। बड़े गुलाम अली खाँ ने इस घराने की गायकी का प्रतिनिधित्व लम्बे समय तक किया। इनके पिता अली बख्श तथा चाचा काले खाँ को बड़े मियां कालू खाँ से संगीत शिक्षा प्राप्त हुई। बड़े गुलाम अली खाँ के पुत्र मुनव्वर अली खाँ भी इस घराने के प्रसिद्ध गायक रहे हैं। नजाकत अली तथा अमानत अली इस घराने के मूर्धन्य कलाकार थे।

गायन शैली: पटियाला घराने की गायकी की मुख्य विशेषता इनके गाए ख्याल में कलापूर्ण बंदिशें हैं। गले की तैयारी पर यहाँ विशेष ध्यान दिया जाता है। इस घराने में लयकारी के द्वारा विविध प्रयोग तथा बोल अंग एवं बोलतान का अधिक मात्रा में प्रयोग किया जाता है। इसमें वक्र, फिरत एवं अलकांरिक तानों का प्रयोग विशेष होता है। स्वरों की शुद्धता एवं तीनों सप्तकों में गले को ले जाने का विशेष अभ्यास इस घराने में किया जाता है।

1.5.6 रामपुर घराना एवं गायन शैली – रामपुर घराने की परम्परा का सम्बन्ध यहाँ के नवाबों से रहा है। नवाब युसुफ अली खाँ संगीत के ज्ञाता व रसिक थे। इन्हीं के दो पुत्र कल्बे अली खाँ तथा हैदर अली खाँ दोनों संगीत में प्रवीण थे। इनके दरबार में संगीतज्ञों का बहुत सम्मान था। हैदर अली खाँ ने संगीत शिक्षा देकर उस्ताद वजीर खाँ जैसे विद्वान संगीतज्ञो को तैयार किया। पं0 भातखण्डे, हाफिज अली खाँ, उस्ताद अलाउद्दीन खाँ के गुरू उस्ताद वजीर खाँ इसी घराने के थे। वजीर खाँ, बहादुर खाँ के दौहित्र थे। बहादुर हुसैन खाँ ने ख्याल गायन के अच्छे शिष्य तैयार किए। रामपुर के प्रसिद्ध गायक इनायत खाँ की संगीत शिक्षा आपके द्वारा हुई। इनके गीत "इनायत पिया" के नाम से प्रसिद्ध हैं। आपके शिष्यों ने रामपुर घराने का नाम रौशन किया इनमें प्रमुख हैं, उस्ताद मुश्ताक हुसैन खाँ, उस्ताद फिदा हुसैन खाँ, उस्ताद हैदर हुसैन खाँ, उस्ताद हफीज खाँ, उस्ताद अमान अली खाँ आदि। फिदा हुसैन खाँ के प्रमुख शिष्यों में उस्ताद निसार हुसैन खाँ, उस्ताद राशीद अहमद खाँ, उस्ताद हफीज़ अहमद खाँ, उस्ताद गुलाम साबिर खाँ, उस्ताद गुलाम मुस्तफा खाँ तथा उस्ताद सरफराज हुसैन खाँ रामपुर घराने के प्रसिद्ध गायक हैं।

गायन शैली – इस घराने के गायक विशेष रूप से मध्य लय में गाते हैं। सादरा गायन में इस घराने के गायक विशेष रूप से दक्ष है। सम्पूर्ण एवं सपाट तानें लेना इस घराने में अधिक चलन में है। इस गायन शैली में स्वर तथा ताल की शिक्षा का विशेष महत्व है। आवाज की तैयारी तथा लय व ताल की शिक्षा के साथ भाषा, भाव तथा साहित्य के ज्ञान के महत्व को इस घराने में विशेष स्थान प्राप्त है।

1.5.7 जयपुर या अतरौली घराना एवं गायन शैली – यह घराना अल्लादिया खाँ घराना के नाम से भी जाना जाता है। अल्लादिया खाँ मूलतः जयपुर निवासी थे। इसीलिए इस घराने को जयपुर घराना भी कहते हैं। अल्लादिया खाँ के पूर्वज अतरौली के निवासी थे। जयपुर के नवाब कल्लन खाँ ने इन्हें राजाश्रय दिया। कुछ संगीतज्ञ जयपुर के करामत अली एवं मुबारक अली को इस घराने का जन्मदाता मानते हैं। अल्लादिया खाँ ध्रुपद की डागुरबानी के वंशज थे। जयपुर के विशिष्ट कलाकार मुबारक अली का उन पर विशिष्ट प्रभाव था। अल्लादिया की शिक्षा अहमद खाँ, जहांगीर खाँ व दौलत खाँ से हुई। इनसे गायकी सीख कर तथा अपनी विशेषताओं को इसमें सम्मिलित कर आपने एक नवीन गायकी की सृष्टि की। इनके दो पुत्र मंजी खाँ व भर्जी खाँ इस घराने के विशिष्ट गायक थे। इनके ही शिष्य मल्लिकार्जुन मंसूर प्रसिद्ध गायक थे। इसके अतिरिक्त इस घराने के प्रमुख कलाकारों में केसरबाई केरकर, मोधुबाई कुर्डीकर तथा लक्ष्मीबाई जाघव के नाम प्रसिद्ध हैं। विदुषी किशोरी अमोलकर एवं अश्विनी भिड़े, वर्तमान में इस घराने की प्रसिद्ध गायिकाएँ हैं।

गायन शैली – खुली आवाज, गायकी में ध्रुपद की गमक, ख्याल का मुक्त रूप से विस्तार, वक्र तानें, लय तथा बोलों का सौन्दर्यात्मक मिश्रण, टप्पा गायन की ताने इस घराने की विशेषताएँ हैं। इस घराने की गायकी मधुर, घुमावदार व भरावदार थी। गायन में लय विलम्बित रहती है तथा उसमें तेज तानें गायी जाती हैं।

1.5.8 इन्दौर घराना एवं गायन शैली – उस्ताद अमीर खाँ को इन्दौर घराने का संस्थापक माना जाता है। इनका निवास स्थान इन्दौर होने के कारण ही इनके घराने का नाम इन्दौर पड़ा। कोई घराना बनने के लिए कम से कम तीन पीढ़ियों तक गुरू–शिष्य परम्परा द्वारा विशिष्ट गायन शैली का निर्माण होना चाहिए परन्तु संगीत जगत में अपनी एक अति विशिष्ट पहचान बनाकर आपकी गायन शैली एक सम्पूर्ण घराने की विशेषताओं से परिपूर्ण मानी गयी। उस्ताद अमीर खाँ, छंगे खाँ साहब की पीढ़ी से सम्बन्ध रखते थे। आपकी शिक्षा अपने पिता उस्ताद शाहमीर खाँ से हुई। आपकी गायकी में उस्ताद रजब अली खाँ, उस्ताद नसीरूद्दीन, उस्ताद हफीज़ खाँ, उस्ताद मुराद खाँ तथा उस्ताद अमान अली खाँ का भी प्रभाव रहा है। पं0 अमरनाथ, डॉ0 अजीत पैण्टल, सिंह बंधु, ए. कानन आप ही के शिष्य रहे हैं।

गायन शैली – इन्दौर घराने की विशेषता स्वरों की मेरखंड पद्धति द्वारा बढ़त है। यह गायन शैली आलाप प्रधान रही है। इस कारण इस घराने में गम्भीर रागों के प्रकार अधिक हैं, जैसे– मालकौंस, दरबारी कान्हड़ा, शुद्ध कल्याण, मारवा, तोड़ी आदि। इस शैली में विलम्बित रचनाओं में गम्भीर,

शान्त वातावरण तथा द्रुत रचनाओं में तान कठिन एवं द्रुत गति से ली जाती है। मेरखंड सरगम भी इस गायकी में विशेष स्थान रखती है।

1.5.9 खुर्जा घराना एवं गायन शैली – इस घराने की परम्परा मैंदू खाँ से आरम्भ होती है। इसके पश्चात दायम खाँ और कायम खाँ तथा बाद में नत्थे खाँ के पुत्र जोधे खाँ इस घराने के प्रसिद्ध संगीतज्ञ हुए। इनके पुत्र इमाम का जन्म खुर्जा में ही हुआ। इमाम खाँ के पुत्र गुलाम हुसैन खाँ, खुर्जा के नवाब आजम अली खाँ के आश्रय में रहे। इनके तीन पुत्र जुहूर खाँ, गफूर बख्श और गुलाम हैदर खाँ इस घराने के प्रतिभा सम्पन्न गायक रहे। वर्तमान में इस घराने का बहुत कम प्रचार रह गया है।

गायन शैली – इस घराने की विशेषता यह है कि इसमें ख्याल के चार भाग होते हैं। शुद्ध मुद्रा एवं शुद्ध शब्द रचना का विशेष ध्यान रखा जाता है। मुर्की का प्रयोग गायन में बहुत कम होता है।

1.5.10 कव्वाल बच्चों का घराना एवं गायन शैली – यह प्राचीन एवं प्रसिद्ध घराना माना जाता है। विद्वान इसे अहमद खाँ का घराना भी कहते हैं। उस्ताद अहमद खाँ के शिष्य पंचम खाँ थे तथा पंचम खाँ के शिष्य उस्ताद मस्सू खाँ रहे। उस्ताद विलायत हुसैन खाँ ने अपनी किताब में सावन्त एवं बूला नामक दो भाइयों को इस घराने का संस्थापक बताया है। इस घराने के अन्य प्रसिद्ध गायकों में सादिक अली खाँ, मौजुद्दीन, फज़ले अली खाँ, मुजाहिर खाँ, रजब अली खाँ, मुबारक अली खाँ, दिलावर अली खाँ, हुसैन खाँ आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।

गायन शैली – इस घराने की गायन शैली में लय एवं ताल की कठोर साधना तथा स्वरों को मधुरता से लगाने का अभ्यास विशेष रूप से कराया जाता है। बंदिशों को अति द्रुत गति से गाने का चलन इस घराने में है। मुश्किल, फिरत एवं कठिन गायकी इस घराने की विशेषता है। सम्भवतः इसी कारण इस घराने को कव्वाल बच्चों का घराना कहा जाता है।

अब्दुल करीम खाँ
किराना घराना

उस्ताद अल्लादिया खाँ
जयपुर घराना

उस्ताद अमीर खाँ
इन्दौर घराना

उ0 बड़े गुलाम अली
पटियाला घराना

पं0 भीमसेन जोशी
किराना घराना

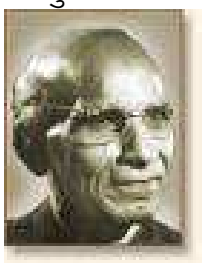
उस्ताद चॉद खाँ
दिल्ली घराना

पं0 डी0वी0 पलुस्कर
ग्वालियर घराना

उस्ताद फैयाज खाँ
आगरा घराना

उ0 मुस्ताक हुसैन खाँ–रामपुर घराना

उ0 वाहिद हुसैन–खुर्जा घराना

अभ्यास प्रश्न

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न :

(i) ख्याल गायकी के विविध घरानों का वर्णन कीजिए।

लघु उत्तरीय प्रश्न :

(i) ग्वालियर घराने की परम्परा के विषय में बताइये।

(ii) इन्दौर घराने की गायकी की विशेषताएँ बताइये।

एक शब्द में उत्तर दीजिए :

(i) उस्ताद हस्सू हद्दू खाँ किस घराने से सम्बन्धित है?

(ii) आगरा घराने के प्रवर्तक का नाम बताइये।

(iii) किराना घराने के वर्तमान में प्रसिद्ध गायक कौन थे?

(iv) जयपुर घराने की एक सुप्रसिद्ध गायिका का नाम बताइये।

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें :

(क) खुर्जा घराने की परम्परा ..... से मानी जाती है।

(ख) रामपुर घराने के गायक ..... गायन में दक्ष हैं।

(ग) पटियाला घराने की बंदिशें ..... होती हैं।

1.6 तानपुरा वाद्य

भारतीय शास्त्रीय संगीत में संगति के लिए सबसे आवश्यक एवं महत्वपूर्ण संगत वाद्यों में तानपुरा का नाम सर्वोपरि है। गायकों के लिए यह अनिवार्य वाद्य है। यह भारतीय संगीत की आत्मा है। तानपुरा को तम्बूरा नाम से भी जाना जाता है। गायन में यह अनिवार्य रूप से बजाया जाता है परन्तु वादन एवं नृत्य में भी इसका प्रयोग किया जाता है। नाटकों एवं सिनेमा के दृश्यों में भी इसकी भूमिका विशेष रूप से देखी जा सकती है। तानपुरा बजते ही सांगीतिक रूप से अनुकूल वातावरण की सृष्टि हो जाती है। इसका स्वर बहुत मधुर होता है तथा स्वतः गायक या वादक का मन गायन या वादन के लिए प्रेरित हो उठता है। तानपुरे की झनकार सुनते ही गायक एवं वादक का मन आनन्दित हो उठता है।

प्राचीन संगीत ग्राम व मूर्च्छना पर आधारित था। इसमें षड्ज(सा) तथा पंचम(प) अपने स्थान से बदल भी सकते थे। जिससे मूर्च्छना द्वारा अनेक जातियों का गायन होता था परन्तु आज हमारे सप्तक में षड्ज एवं पंचम अचल स्वर हैं। आज सभी स्वरों का सम्बन्ध षड्ज से है। तानपुरे में यही षड्ज एवं पंचम स्वरों की लगातार गूंज से एक संगीतमय वातावरण की पृष्ठभूमि बन जाती है जिसकी सहायता से गायक व वादक किसी भी राग को भावपूर्ण तरीके से गा–बजा सकता है।

1.6.1 तानपुरा की उत्पत्ति एवं विकास – विद्वानों का मत है कि पौराणिक गायक तुम्बरू ने तानपुरे का आविष्कार किया। प्राचीन ग्रन्थों में इसकी चर्चा नहीं है। मूर्तिकलाओं एवं शिल्प कलाओं में भी इस वाद्य का चित्र प्राप्त नहीं होता है। प्राचीन काल में एकतंत्री एवं दोतंत्री वीणा को निरन्तर बजाकर गायन सम्पन्न होता था। ऐसा प्रतीत होता है कि आवश्यकता को ध्यान में रखकर धीरे–धीरे संवाद सिद्धान्त के आधार पर चार तारों के इस तानपुरा वाद्य की सृष्टि हुई होगी। विद्वानों का मत यह भी है कि प्राचीन त्रितंत्री वीणा का विकसित रूप ही तानपुरा है। इस वीणा की संगत गायन के साथ की जाती थी। इस तीन तार वाली वीणा में एक तार और जोड़कर ही तम्बूरे की उत्पत्ति हुई होगी। डॉ0 लालमणि मिश्र के अनुसार त्रितंत्री वीणा का विकास दो रूपों में हुआ–
1. तानपुरा **2.** सितार

1.6.2 तानपुरे के अंगः–

1. **तूम्बाः** यह कद्दू का बना होता है जिसको एक तरफ से काट कर चपटा किया जाता है। फिर इस पर लकड़ी का मुख भाग लगाया जाता है।

2. **डांडः** लकड़ी का खोखला डंडा जो तूम्बे के साथ जुड़ा रहता है डांड कहलाता है। इसके ऊपर तारें चढ़ी रहती हैं।
3. **तबलीः** तुम्बे के ऊपर वाले चपटे भाग को तबली कहते हैं। इसमें नक्कासी का काम किया जाता है तथा ऊपर घुड़च्च रखी जाती है।
4. **घुड़च्चः** तबली के ऊपर रखी हुई हाथी दाँत के छोटे आकार की चौकीनुमा भाग को घुड़च्च कहते हैं। इसके ऊपर से तार जाते हैं।
5. **लंगोटः** तुम्बे के दाँयी ओर लगे हुए कील को, जिसके ऊपर तार बॉधे जाते है, लंगोट कहते है।
6. **गुलूः** डांड एवं तुम्बे के जोड़ वाले स्थान को गूलू कहा जाता है।
7. **अट्टी या तारदानः** डांड के ऊपर वाले भाग में हड्डियों से बनी हुई दो पट्टियाँ लगी रहती हैं जिसमें छिद्र होते हैं तथा इन छिद्रों से तार निकलकर खूटियों में बाँध दिए जाते हैं। इसी भाग को अट्टी या तारदान कहते हैं।
8. **खूंटियाँः** तम्बूरे के चार तार अट्टी से होते हुए खूटियों के साथ बाँध दिए जाते हैं। यह खूंटियाँ ऊपरी भाग में होती हैं। दो खूंटियाँ डांड के सामने तथा दो खूंटियाँ डांड के दाँयी एवं बाँयी ओर लगी होती हैं।
9. **तारः** तानपुरे में चार तार लगे होते हैं। जिनमें प्रथम तीन तार फौलाद के तथा शेष एक तार पीतल का होता है।
10. **मनकेः** घुड़च्च या ब्रिज के नीचे छोटे–छोटे मोती जैसे मनके तारों में डाल दिए जाते हैं जिनसे सूक्ष्म रूप में स्वर के उतार–चढ़ाव को निर्धारित किया जा सकता है।
11. **धागाः** घुड़च्च के ऊपर तारों पर गूंज के लिए धागा लगाया जाता है। जब तार में कम्पन्न होता है तब इस कम्पन्न में धागा मुख्य स्वर के अतिरिक्त अन्य स्वयंभू स्वरों के उत्पन्न होने में सहायक रहता है। इसी कारण अन्य स्वर जो सहायक नाद कहलाते हैं, सुनाई देते हैं।

तानपुरा

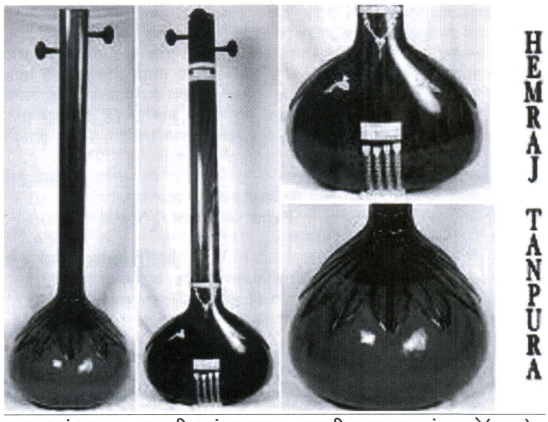

तुम्बा एवं डाट तबली एवं अग्रभाग तबली, घुड़च्च एवं मनके(ऊपर) तुम्बा एवं गुलू(नीचे)

1.6.3 तानपुरा और सहायक नाद – तानपुरे में मूल स्वरों के साथ कुछ सहायक नाद भी होते हैं। इसका तात्पर्य है कि जो स्वर तानपुरे में मिलाए जाते हैं उसके अतिरिक्त अन्य सातों स्वरों की उत्पत्ति भी तानपुरे की गूंज में समाहित होती है। मूल स्वरों के अतिरिक्त अन्य स्वर सहायक नाद अथवा स्वयंभू स्वर कहलाते हैं। तानपुरे के चार तार जिनमें षड्ज, मध्यम, पंचम या निषाद स्वर मिलाए जाते हैं वह गायक–वादक को सातों स्वरों का आभास देते हैं जिससे संगीतज्ञ सुर से बाहर नहीं जाता। इसी कारण तानपुरे वाद्य को स्वर साधना के लिए सर्वोच्च स्थान प्राप्त है। विद्वानों का मानना है कि तानपुरे में स्वर अभ्यास से स्वरों पर पर्याप्त अधिकार प्राप्त किया जा सकता है।

1.6.4 तानपुरे को मिलाने की विधि – तानपुरे में चार तार होते हैं। सबसे पहला तार मन्द्र पंचम(प) पर और दूसरा, तीसरा तार मध्य षड्ज(स) पर तथा चौथा अन्तिम तार मन्द्र षड्ज(सा) पर मिलाया जाता है। जब तानपुरे को मिलाकर इन स्वरों पर छेड़ा जाता है तो यह षड्ज–पंचम संवाद कहलाता है। यह संवाद भारतीय संगीत के लिए सबसे उत्तम माना जाता है। जिन रागों में पंचम स्वर नहीं प्रयुक्त होता उसके लिए तानपुरे पर मध्यम(म) स्वर मिलाया जाता है।

एक अन्य प्रकार से भी तानपुरा मिलाया जाता है जिसमें पहले तार को निषाद(नि) पर मिलाया जाता है। ऐसा तब किया जाता है जब हम उन रागों को गाते बजाते हैं जिनमें शुद्ध मध्यम को छोड़ तीव्र मध्यम का प्रयोग होता है। इन रागों में पूरिया, मारवा, हिंडोल, सोहनी आदि प्रमुख हैं। अब हम यह बता देते हैं कि अगर तानपुरे में स–प मिला हो तो हमें मध्यम स्वर नहीं मिलता। इसीलिए दो तानपुरे लेकर एक को स–प तथा दूसरे को स–नि पर मिलाएँ तब हमें सातों स्वरों(स्वयभूं स्वरों) की प्राप्ति हो सकेगी। ये सहायक नाद हैं। इनका भारतीय संगीत के क्षेत्र में विशेष महत्व है। सातों स्वरों की प्राप्ति के कारण ही तानपुरा सबसे उपयोगी संगत वाद्य माना गया है। इसकी गूंज से संगीतज्ञ राग से दूर नहीं जाता है। रागों को संतुलित वातावरण तानपुरे द्वारा ही प्राप्त होता है।

1.6.5 तानपुरे के प्रकार एवं वादन विधि – तानपुरे दो प्रकार के होते हैं :

1. स्त्रियों का तानपुरा 2. पुरूषों का तानपुरा

1. स्त्रियों के तानपुरे का तुम्बा पुरूषों की तुलना में छोटा होता है। स्त्री तानपुरे के तार भी बारीक रहते हैं। प्रथम तीन तार फौलाद के तथा चौथा तार पीतल का होता है।
2. पुरूषों के तानपुरा का तुम्बा बहुत बड़ा होता है क्योंकि पुरूष गलें में स्वर गम्भीर एवं नीचा होता है तथा बड़े तुम्बे में स्वर में बहुत गम्भीरता रहती है। इस तानपुरे में तार स्त्रियों की तुलना में मोटे होते हैं क्योंकि स्त्रियों का स्वर स्वाभाविक रूप से पुरूषों की तुलना में अधिक ऊँचा होता है।

तानपुरा बजाते समय स्वयं गायक एवं तानपुरा संगतकार कई तरह की मुद्रा में बैठते हैं। कुछ संगतकार एक घुटना खड़ा करके तथा दूसरे को जमीन पर लगाकर तानपुरा बजाते हैं। कुछ संगीतज्ञ तानपुरे को जमीन में सीधा रखकर दोनों पैरों को मोड़कर बैठक में संगत करते हैं। कुछ संगतकार तानपुरे को कंधे में सटाकर दोनों पैरों को मोड़कर बैठक में भी बजाते हैं। दाँए हाथ की अंगुलियों से तार पर प्रहार करके तानपुरा बजाया जाता है। पहले तार को मध्यमा उंगली से तथा शेष तीन तारों को तर्जनी उंगली से बजाते हैं। तानपुरे का पहला तार ही क्रमशः प, म, नि स्वरों पर रागानुकूल परिस्थिति के आधार पर मिलाया जाता है अन्य तीन तार मध्य एवं मन्द्र षड्ज पर मिलाए जाते हैं।

षड्ज तथा पंचम का इतना घनिष्ठ संवाद है कि दोनों का साथ–साथ उच्चारण कर्णप्रिय लगता है। इस वाद्य के तारों की झंकार या गूंज किसी भी राग एवं उसके गीत और स्वर विस्तार के साथ ऐसे घुल मिल जाती है कि किसी भी पृथकता का अनुभव नहीं होता है। यह वाद्य वादन संगीत में भी प्रत्येक वाद्य का सहचर सिद्ध होता है तथा उसके प्रभाव को और बढ़ाने में सहायता करता है। इस प्रकार तानपुरा भारतीय संगीत की आत्मा तथा मूलाधार है। वर्तमान में तानपुरा वाद्य

में कहीं–कहीं पॉच, छः तारों का भी प्रयोग दिखाई देता है। दक्षिण भारत में तम्बूरे में दो तुम्बे लगाने की व्यवस्था भी नज़र आती है।

अभ्यास प्रश्न :

1) लघु उत्तरीय प्रश्न :

(i) तानपुरा वाद्य में स्वरों को किस प्रकार मिलाया जाता है?

(ii) तानपुरे के प्रकारों को बताइए।

2) एक शब्द में उत्तर दीजिए :

(i) तानपुरे के आविष्कारक कौन थे?

(ii) तानपुरे का प्रथम तार किस स्वर पर मिलाते हैं?

(iii) किस वाद्य से तानपुरा की उत्पत्ति मानी जाती है?

3) सत्य/असत्य बताइए :

(क) तानपुरे में तीन तार होते हैं।

(ख) तानपुरे के तारों में गूंज के लिए लकड़ी लगाई जाती है।

(ग) राग पूरिया, मारवा में तानपुरे के प्रथम तार को निषाद में मिलाते हैं।

1.7 सारांश

इस इकाई को पढ़ने के पश्चात आप जान चुके हैं कि संगीत लोकरंजन के साथ आत्मसाक्षात्कार का साधन भी है। मध्यकाल में ध्रुपद गायन शैली का प्रचार था परन्तु वर्तमान में ख्याल गायन शैली का प्रचार सबसे अधिक है। एक ही राग को ख्याल गायन शैली के अन्तर्गत भिन्न–भिन्न तरीकों से गाया जाता है। इसमें गीत रचनाओं का विस्तार भी बहुत अधिक है। गीत रचना एवं गायन शैली दोनों दृष्टियों में ख्याल का विशेष स्थान है। इस इकाई में आप जान चुके हैं कि ख्याल गायन शैली में राग के भीतर का सौन्दर्य निर्माण विशेष रूप से गायक की कल्पना एवं प्रतिभा पर निर्भर करता है। ख्याल गायन शैली के विशिष्ट घरानों के विषय में भी आप जान चुके है कि घरानों के संगीतज्ञों ने अपनी एक अलग गायन शैली का निर्माण कर अत्यधिक सम्मान प्राप्त किया। आप यह भी जान चुके है कि विभिन्न घरानों की गायन शैली की विशेषताएँ भिन्न–भिन्न हैं तथा कौन कलाकार किस घराने से सम्बन्धित है।

आप इस इकाई में यह भी जान चुके हैं कि वर्तमान समय में संगत के लिए गायन–वादन हेतु तानपुरा वाद्य सबसे महत्वपूर्ण है। गायकी के सम्पूर्ण तत्वों का स्पष्टीकरण एकमात्र तानपुरे से ही सम्भव है। साथ ही आप तानपुरे को देखते ही उसके समस्त अंगों के विषय में जान सकेंगे। संगीत के क्षेत्र में स्वर साधना के लिए तानपुरा सर्वोत्तम वाद्य है।

1.8 शब्दावली

1. **अलंकार** : विभिन्न स्वर समुदाय जो एक नियमबद्ध तरीके से बधे हुए हों।
2. **उपशास्त्रीय संगीत** : शास्त्रीय संगीत के अतिरिक्त उपशास्त्रीय संगीत में नियमों में शिथिलता रहती है, जैसे– ठुमरी गायन।
3. **मींड़** : एक स्वर से दूसरे स्वर में झूमते हुए आने को मीड़ कहते हैं।
4. **त्रिवट** : त्रिवट वह गायन विधा है जिसमें तीन तरह के बोलों का प्रयोग होता है, जैसे – शब्द, तालवर्ण, तराने के शब्द।
5. **चतुरंग** : त्रिवट के समान इसमें तीन की बजाए चार बोलों का प्रयोग होता है, इसमें सरगम और जोड़ी जाती है।
6. **सादरा गायन** : सादरा गायन उपशास्त्रीय संगीत के अन्तर्गत आती है। यह विशेष रूप से झपताल में निबद्ध होती है।
7. **वक्र, फिरत** : यह तानों के प्रकार है। वक्र में स्वरों को लगातार क्रम में नहीं लेते हैं तथा फिरत में स्वरों को लगातार एक नियमबद्ध तरीके से घुमाते रहते हैं।

8. ग्राम मूर्च्छना : प्राचीन काल में राग गायन की परम्परा नहीं थी। उस समय ग्राम एवं मूर्च्छना का प्रचलन था। मूर्च्छना से जातियों की उत्पत्ति होती थी जो राग के समान गायी जाती थी।

9. प्रबन्ध : ख्याल गायन से पूर्व ध्रुपद गायन का तथा ध्रुपद से पूर्व प्रबन्ध गायन का प्रचलन था।

10.मेरखण्ड : स्वरों के निश्चित क्रम को जिसमें एक के बाद एक स्वर को स्थान मिलाते हुए गायन हो उसे मेरखण्ड गायकी कहते हैं।

1.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1.3 उत्तरमाला :

2) एक शब्द में उत्तर दीजिए :

(i) उत्तर : विलम्बित ख्याल

1.4 उत्तरमाला :

2) एक शब्द में उत्तर दीजिए :

(i) उत्तर : तीन पीढ़ी

1.5 उत्तरमाला :

3) एक शब्द में उत्तर दीजिए :

i) उत्तर : ग्वालियर

ii) उत्तर : घग्गे खुदाबख्श

iii) उत्तर : पंडित भीमसेन जोशी

iv) उत्तर : किशोरी अमोलकर

4) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :

उत्तर : (क) उ0 मैदू खाँ **(ख)** सादरा गायन **(ग)** कलापूर्ण

1.6 उत्तरमाला :

2) एक शब्द में उत्तर दीजिए :

i) उत्तर : तुम्बरू

ii) उत्तर : पंचम

iii) उत्तर : त्रितंत्री वीणा

3) सत्य असत्य बताइए :

उत्तर : (क) असत्य (ख) असत्य (ग) सत्य

1.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. बृहस्पति, डॉ0 सौभाग्यवर्द्धन, (2004), *संगीत चिन्तन प्रथम खण्ड,* अभिषेक पब्लिकेशन, चण्डीगढ़।
2. सक्सेना, डॉ0 मधुबाला, (1985), *ख्याल शैली का विकास,* विशाल पब्लिकेशन, कुरूक्षेत्र।
3. परांजपे, डॉ0 शरच्चन्द्र श्रीधर (1992), *संगीत बोध,* मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल।
4. साभार गूगल।

1.11 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. कौर, डॉ0 भगवन्त, *परम्परागत हिन्दुस्तानी सैद्धान्तिक संगीत,* कनिष्का पब्लिशर्स, नई दिल्ली।
2. वसन्त,(1997), *संगीत विशारद,* संगीत कार्यालय, हाथरस।

1.12 निबन्धात्मक प्रश्न

1. घराने से आप क्या समझते हैं?बताइए तथा ख्याल गायकी के विभिन्न घरानों की विवेचना कीजिए।
2. तानपुरे के स्वरूप एवं उसके वादन विधि का वर्णन कीजिए।

इकाई 2 – संगीतज्ञों (पं0 वी0एन0 भातखण्डे, पं0 वी0डी0 पलुस्कर व सदारंग–अदारंग) का जीवन परिचय

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 संगीतज्ञों का जीवन परिचय
2.3.1 पं0 वी0 एन0 भातखण्डे
2.3.2 पं0 वी0 डी0 पलुस्कर
2.3.3 सदारंग–अदारंग
2.4 सारांश
2.5 शब्दावली
2.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
2.7 संदर्भ ग्रन्थ सूची
2.8 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
2.9 निबन्धात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0 संगीत के पाठ्यक्रम (बी0ए0एम0वी0–101) के द्वितीय खण्ड की दूसरी इकाई है। इससे पहले की इकाईयों के अध्ययन के बाद आप बता सकते हैं कि संगीत किसे कहते हैं? आप भारतीय संगीत के इतिहास, सांगीतिक शब्दों की परिभाषा तथा ख्याल की उत्पत्ति, विकास एवं घरानों को संक्षिप्त परिचय; तानपुरे की संरचना एवं मिलाने की विधि से भी परिचित हो चुके होंगे।

प्रस्तुत इकाई में देश के कुछ प्रतिष्ठित संगीतज्ञों के जीवन से आपको परिचित कराया जाएगा, जिन्होंने संगीत के प्रचार–प्रसार में अपना बहुमूल्य योगदान दिया।

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप यह जान पाऐंगे कि इन संगीतज्ञों ने संगीत के क्षेत्र में क्या–क्या शोध किए जिनसे भारतीय संगीत जगत लाभान्वित हुआ?

2.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप :–

- पं0 वी0एन0 भातखण्डे जी, पं0 वी0डी0 पलुस्कर जी व सदारंग–अदारंग जी के व्यक्तित्व के बारे में जान सकेंगे।
- भारतीय संगीत के प्रचार–प्रसार के लिए इनके योगदान के विषय में जान सकेंगे।
- जान सकेंगे कि इन्होंने क्या आविष्कार व रचनाएं की।
- इन महान संगीतज्ञों के जीवन परिचय एवं भारतीय संगीत में योगदान से प्रेरणा ले सकेंगे।

2.3 संगीतज्ञों का जीवन परिचय

संगीतज्ञों का जीवन परिचय, संगीत के विद्यार्थियों के लिए अत्यन्त उपयोगी होता है। उन्हें इससे संगीत साधना के मार्ग में आगे बढ़ने की प्रेरणा मिलती है और उनको आदर्श मानकर उनके पद चिन्हों पर चलने की शक्ति प्राप्त होती है।

2.3.1 पं0 विष्णु नारायण भातखण्डे :–

प्रारम्भिक जीवन – पं0 विष्णु नारायण भातखण्डे का जन्म **10 अगस्त सन् 1860** का बम्बई प्रान्त के बालकेश्वर नामक स्थान में कृष्ण जन्माष्टमी के दिन हुआ था। उन्हें अपने पिता से, जिन्हें संगीत से विशेष प्रेम था, संगीत सीखने की प्रेरणा मिली। अतः आप विद्यालयी शिक्षा के साथ–साथ संगीत शिक्षा भी ग्रहण करते रहे। आपने सितार, गायन और बांसुरी की शिक्षा प्राप्त की और तीनों का अच्छा अभ्यास भी किया। आपने सेठ बल्लभ दास से सितार और गुरूराव बुआ बेलबाथकर, जयपुर के मोहम्मद अली खां, ग्वालियर के पं0 एकनाथ, रामपुर के कस्बे अली खां से गायन सीखा। सन् 1883 में बी0ए0 और 1890 में एल0एलबी0 की परीक्षायें उत्तीर्ण की। कुछ समय तक आपने वकालत भी की, किन्तु संगीत के महान प्रेमी का मन वकालत में नहीं लगा।

कार्य – वकालत छोड़कर आप संगीत सेवा में लग गए। सर्वप्रथम संगीत के शास्त्रीय पक्ष की ओर संगीतज्ञों का ध्यान आकर्षित करने का श्रेय आपको ही है। उनके समय के संगीतज्ञ, संगीत–शास्त्र पर बिल्कुल भी ध्यान नही देते थे। अतः उनके गायन–वादन में बड़ी विषमताएं आ गई थी। अतः आपने देश के विभिन्न भागों का भ्रमण किया और संगीत के प्राचीन ग्रन्थों की खोज की। यात्रा में जहॉ भी आपको संगीत का जो भी विद्वान मिला उनसे आप तुरन्त मिलने गए, उनसे भावों का आदान–प्रदान किया और जो कुछ भी ज्ञान धन देकर, सेवा कर अथवा शिष्य बनकर प्राप्त हो सका, आपने बिना संकोच उनसे वह ज्ञान प्राप्त किया। कहीं–कहीं आपको बहुत दिक्कतें हुयी, किन्तु फिर भी विभिन्न रागों के बहुत से गीत एकत्रित किए और उनकी स्वरलिपि 'भातखण्डे क्रमिक पुस्तक मालिका'–6 भागों में संग्रहित कर संगीत प्रेमियों के लिए संगीत की रचनाओं का अथाह भण्डार सुरक्षित कर दिया। उस समय किसी व्यक्ति को केवल एक गीत सीखने के लिए सालों तक अपने गुरू की सेवा करनी पड़ती थी। अतः ऐसे समय में क्रमिक पुस्तकों से संगीत के विद्यार्थियों को बहुत लाभ पहुॅचा।

क्रियात्मक संगीत को लिपिबद्ध करने के लिए भातखण्डे जी ने एक सरल और नवीन स्वरलिपि की रचना की, जो भातखण्डे स्वरलिपि पद्धति के नाम से प्रसिद्ध है। उत्तरी हिन्दुस्तान में यही पद्धति प्रचलन में है। यह पद्धति अन्य की तुलना में सरल और सुबोध है।

इसके अतिरिक्त राग वर्गीकरण का एक नवीन प्रकार – थाट राग वर्गीकरण को प्रचारित करने का श्रेय भी भातखण्डे जी को ही जाता है। आपने वैज्ञानिक ढ़ंग से समस्त रागों को 10 थाटों में विभाजित किया। उनके समय में राग–रागिनी पद्धति प्रचलित थी। उन्होंने उसकी कमियों को समझा और उसके स्थान पर थाट पद्धति का प्रचार किया तथा काफी स्थान पर बिलावल को शुद्ध थाट माना।

जिस समय भारत में रेडियो का प्रचार नहीं था उस समय भातखण्डे जी ने संगीत के प्रचार हेतु संगीत–सम्मेलनों की कल्पना की और सन् 1916 में बड़ौदा नरेश की सहायता से प्रथम संगीत–सम्मेलन सफलता पूर्वक आयोजित किया। सन् 1925 तक आप पॉच वृहद संगीत सम्मेलन

आयोजित कर चुके थे। आपके प्रयासों से कई संगीत विद्यालयों की स्थापना हुई। जिनमें लखनऊ का *''मैरिस म्यूजिक कालेज* (अब *भातखण्डे संगीत महाविद्यालय*), ग्वालियर का *''माधव संगीत महाविद्यालय''* तथा बड़ौदा का *'म्यूजिक कालेज'* विशेष उल्लेखनीय है।

आपके द्वारा रचित मुख्य पुस्तकों की सूची इस प्रकार है :–

- भातखण्डे क्रमिक पुस्तक मालिक–6 भागों में
- भातखण्डे संगीत शास्त्र–4 भागों में
- अभिनव राग मंजरी, अभिनव ताल मंजरी
- श्रीमल्लक्ष्य संगीत
- स्वरमालिका, गीत मालिका

मृत्यु – इस प्रकार अपने अथक परिश्रम द्वारा संगीत की महान सेवा कर और भारतीय शास्त्रीय संगीत को एक नए प्रकाश से आलोकित कर आप **19 सितम्बर 1936** का परलोक वासी हो गए।

2.3.2 पं0 विष्णु दिगम्बर पलुस्कर :–

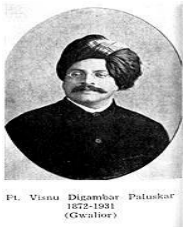

जन्म व शिक्षा – ग्वालियर घराने के प्रसिद्ध संगीतज्ञ पं0 विष्णु दिगम्बर पलुस्कर का जन्म **18 अगस्त सन् 1872**, श्रावण पूर्णिमा को *कुरून्दवाड़* रियासत के बेलगॉव नामक स्थान में हुआ। आपके पिता का नाम दिगम्बर गोपाल और माता का नाम गंगा देवी था। आपके पिता एक अच्छे कीर्तनकार थे। उन्होंने आपको एक अच्छे विद्यालय में भेजना शुरू किया, किन्तु दुर्भाग्यवश दीपावली के दिन आतिशबाजी से आपकी ऑखें खराब हो गई। परिणामस्वरूप अध्ययन बन्द कर देना पड़ा। ऑख के बिना कोई उचित धंधा न मिलने के कारण आपके पिता ने आपको संगीत सिखाना शुरू किया। आपको मिरज के पंडित बालकृष्ण बुआ इचलकरंजीकर के पास संगीत शिक्षा ग्रहण करने के लिए भेज दिया। वहॉ मिरज रियासत के तत्कालीन महाराजा ने आपको आश्रय दिया।

एक हृदय विदारक घटना – एक बार मिरज में एक सार्वजनिक सभा आयोजित हुई और रियासत के प्रतिष्ठित व्यक्तियों को निमन्त्रित किया गया। पं0 विष्णु दिगम्बर जी को राजाश्रय् प्राप्त होने के कारण आमंत्रित तो किया गया, परन्तु उनके गुरू को नहीं बुलाया गया। आपने जब उन्हें न बुलाए जाने का कारण जानना चाहा तो पता चला कि उन्हें समाज में प्रतिष्ठित नहीं समझा जाता था क्योंकि वे एक संगीतकार थे। उस काल में संगीतकारों को निम्न श्रेणी का समझा जाता था। समाज में संगीतकारों की यह दयनीय दशा देखकर आप बहुत दुखी हुए। आपने इस स्थिति को सुधारने, समाज में संगीत को उच्च स्थान दिलाने तथा संगीत का प्रचार–प्रसार करने का दृढ़ निश्चय किया।

कार्य – संगीत का प्रचार–प्रसार करने के लिए आपने सर्वप्रथम श्रृंगार रस के शब्दों की जगह भक्ति रस के शब्दों को रखकर संगीत के कुछ विद्यालय स्थापित किए जहॉ लोगों को संगीत की समुचित शिक्षा दी जा सके। आपने **5 मई 1901** को प्रथम संगीत विद्यालय "गंधर्व महाविद्यालय" की स्थापना लाहौर में की। शुरू में कई दिनों तक कोई भी व्यक्ति विद्यालय में प्रवेश के लिए नहीं आया, किन्तु आप निराश नहीं हुए। विद्यालय के समय वे स्वयं तानपुरा लेकर अभ्यास करते रहते थे। कुछ दिनों बाद विद्यार्थियों की संख्या धीरे–धीरे बढती चली गई। सन् 1908 में आपने गन्धर्व महाविद्यालय की एक शाखा बंबई में खोली। वहॉ पर आपको लाहौर की तुलना में अधिक सफलता मिली।

वैदिक काल में प्रचलित आश्रम प्रणाली के आधार पर आपने लगभग सौ शिष्यों को तैयार किया। आपके अधिकांश शिष्य आपके साथ रहते थे। उनके खाने, पीने, रहने तथा शिक्षा का प्रबन्ध आप निःशुल्क करते थे। आपके शिष्यों में *स्व0 वी0एन0 कशालकर, स्व0 पं0 ओंकारनाथ ठाकुर, स्व0 पं0 बी0आर0 देवधर, स्व0 वी0एन0 पटवर्धन* आदि नाम उल्लेखनीय हैं।

उस समय तक गीत को लिखने के लिए कोई स्वरलिपि पद्धति नहीं थी। इसलिए आपने एक स्वरलिपि पद्धति की रचना की जो विष्णु दिगम्बर स्वरलिपि पद्धति के नाम से जानी जाती है।

आपके 12 पुत्र हुए उनमें से 11 पुत्रों की मृत्यु बाल्यावस्था में ही हो गई, केवल एक पुत्र श्री डी0वी0 पलुस्कर अपने समय के अच्छे गायक हुए।

आपके द्वारा रचित पुस्तकें – *संगीत बाल प्रकाश, राग प्रवेश* बीस भाग में, *संगीत तत्व–दर्शक, संगीत शिक्षा, महिला संगीत, भजनामृत लहरी* आदि। जनता में शीघ्र संगीत का प्रचार करने के लिए कुछ समय तक आपने *'संगीतामृत प्रवाह'* नामक मासिक पत्रिका का प्रकाशन भी किया।

मृत्यु – 1930 में आपको लकुवा मार गया, फिर भी अपनी कार्य क्षमता के अनुकूल आप संगीत की सेवा करते रहे। अन्त में **21 अगस्त सन् 1931** को आपने अपने प्राण त्याग दिए।

2.3.3 सदारंग–अदारंग :–

जन्म व शिक्षा – बहादुर शाह प्रथम के पौत्र मुहम्मद शाह रंगीले के काल में संगीत की दो विलक्षण विभूतियों का परिचय प्राप्त होता हैं–नियामत खॉ (सदारंग) व फिरोज़ खॉ (अदारंग)। ख्याल की बहुत सी रचनाओं में 'सदारंगीले मोंमदसा' ऐसा नाम कई बार देखने में आता है। 18 वीं शताब्दी में नियामत खॉ नाम के प्रसिद्ध बीनकार हुए। ये अपनी बनाई हुई रचनाओं में उस समय के बादशाह मुहम्मद शाह का नाम दे दिया करते थे। बादशाह को प्रसन्न करने के लिए ही वे ऐसा किया करते थे। नियामत खॉ अपना उपनाम 'सदारंगीले' रखकर साथ में बादशाह का नाम भी जोड़ दिया करते थे। 'सदारंगीले' को ही 'सदारंग' भी कहा जाता था। नियामत खॉ (सदारंग) के खानदान के बारे में बताया जाता है कि ये तानसेन की पुत्री के खानदान में दसवें व्यक्ति थे। इनके पिता का नाम लाल खॉ सानी और बाबा का नाम खुशाल खॉ था।

कार्य – यद्यपि ख्याल रचना का कार्य सर्वप्रथम अमीर खुसरो ने शुरू किया था। किन्तु उस समय ख्याल रचना विशेष लोकप्रिय नहीं हो सकी। इसके बाद सुल्तान हुसैन शर्की, बाजबहादुर, चंचलसेन, चांद खॉ तथा सूरज खॉ ने भी यह कार्य करने की चेष्टा की, किन्तु उन्हें भी विशेष सफलता नहीं मिल सकी। नियामत खॉ ने उनकी इन असफलताओं का कारण ढूँढ निकाला। इन्होंने अनुभव किया कि जब तक कविताओं में बादशाह का नाम नहीं डाला जाएगा तब तक वे अच्छी तरह प्रचलित नहीं हो सकेंगी। साथ ही उन्हें रूठे हुए बादशाह को भी खुश करना था, क्योंकि वेश्याओं को तालीम न देने पर बादशाह नाराज हो गए थे। अतः वे उपनाम 'सदारंगीले' के साथ बादशाह का नाम तो डालने लगे, किन्तु इसकी खबर बादशाह को नहीं लगने दी कि यह कविताएं किसकी बनाई हुई हैं और सदारंग कौन हैं। इस प्रकार बहुत सी कविताएं नियामत खॉ ने तैयार करके अपने शागिर्दों को भी तैयार करवाई। जब बादशाह को यह कविताएं ख्याल में गाकर सुनाई गई, तो वे बड़े प्रभावित हुए और ये जानने की इच्छा प्रकट की कि यह सदारंगीले कौन है। नियामत खॉ के शागिर्दों ने जवाब दिया कि हमारे उस्ताद जिनका नाम नियामत खॉ है उनका तखल्लुस (उपनाम) सदारंगीले है। बादशाह ने कहा कि अपने उस्ताद को बुला कर लाओ। नियामत खॉ दरबार में उपस्थित हुए तो बादशाह मुहम्मद शाह ने उनके पुराने अपराधों को क्षमा कर दिया और उन्हे पुनः आदरपूर्वक अपने दरबार में रख लिया। आप वीणा बजाकर गायकों की संगत करने के लिए स्थायी रूप से दरबार में रहने लगे। इस प्रकार सदारंग ने पुनः अपना रंग जमाकर आदर प्राप्त कर लिया।

सदारंग के ख्यालों में विशेष रूप से श्रृंगार रस पाया जाता है। कहा जाता है कि सदारंग ने स्वयं अपनी रचनाएं महफिलों में नहीं गाई। उनका कहना था कि खुद अपने लिए या अपने खानदान के लिए उन्होंने ये रचनाएं नहीं बनाई हैं, बल्कि बादशाह सलामत को खुश करने के उद्देश्य से ही इनकी रचना की गई है। इस तरह आपकी रचनाएं समाज में फैल गई और ख्याल गायक व गायिकाओं ने आपकी रचनाएं सुनी और अपनाई।

आपने भारतीय शास्त्रीय संगीत को नए आयाम दिए। आप बीनकार और ख्याल रचयिता के साथ–साथ अच्छे वाग्गेयकार भी थे। आपने गायक की कल्पना के स्रोतों को और आगे की ओर ले जाने में मदद की। जैसे गमक के विचित्र प्रकार के लगाव, मीड़ का वैचित्र, आलापचारी का ढंग तथा उसकी बढ़त के विभिन्न रंग आदि।

सदारंग के साथ–साथ कुछ रचनाओं में अदारंग का नाम भी आता है। इसके बारे में कहा जाता है कि नियामत खॉ के दो पुत्र थे, जिनका नाम फिरोज खॉ और भूपत खॉ था। फिरोज खॉ का ही उपनाम 'अदारंग' है। भूपत खॉ का उपनाम 'महारंग' था। इस प्रकार पिता के साथ–साथ दोनों पुत्र भी संगीत के क्षेत्र में अपना नाम सदा के लिए अमर कर गए।

अभ्यास प्रश्न

(अ) वस्तुनिष्ठ प्रश्न :

1. 'मैरिस म्यूजिक कालेज' की स्थापना किसने की?

क) पं0 विष्णु दिगम्बर पलुस्कर **ख)** पं0 विष्णु नारायण भातखण्डे
ग) सदारंग **घ)** अदारंग

2. नियामत खॉ व फिरोज़ खॉ किस राजा के काल के थे?

क) अकबर **ख)** जहॉगीर
ग) मुहम्मद शाह रंगीले **घ)** बहादुर शाह ज़फर

3. उपनाम 'अदारंग' से किसकी रचनाएं हैं?

क) फिरोज खॉ **ख)** भूपत खॉ
ग) नियामत खॉ **घ)** पं0 वी0एन0 भातखण्डे

4. पं0 ओंकार नाथ ठाकुर किसके शिष्य थे?

क) पं0 वी0एन0 भातखण्डे **ख)** पं0 विष्णु दिगम्बर पलुस्कर
ग) फिरोज खॉ **घ)** भूपत खॉ

(ब) रिक्त स्थानों की पूर्ति :

1. पं0 विष्णु नारायण भातखण्डे जी ने समस्त रागों को ––––– थाट में विभाजित किया।
2. अभिनव राग मंजरी ––––––––––––––––––– ने लिखी है।
3. पं0 विष्णु दिगम्बर पलुस्कर जी के पिता का नाम ––––––––––––––––– था।
4. पं0 विष्णु दिगम्बर पलुस्कर जी ने ––––––––––––– से संगीत की शिक्षा ग्रहण की।
5. अदारंग (फिरोज़ खॉ), सदारंग (नियामत खॉ) जी के ––––––––––––– थे।

(स) लघु उत्तरीय प्रश्न :

1. पं0 भातखण्ड़े जी के कार्यों के बारे में बताइए।
2. सदारंग–अदारंग का भारतीय शास्त्रीय संगीत में क्या योगदान रहा? बताइए।

2.4 सारांश

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात आप भारतीय शास्त्रीय संगीत के महान संगीतज्ञों के सांगीतिक जीवन व इससे जुड़े महत्वपूर्ण तथ्यों के बारे में जान चुके होंगे। आप यह जान चुके होंगे कि इन संगीतज्ञों ने किन विषम परिस्थितियों में संगीत का प्रचार–प्रसार किया व किस तरह इसे जन–जन तक पहुंचाया। इस इकाई के अध्ययन के बाद आप यह भी जान चुके होंगे कि जो संगीत

शिक्षा केवल गुरू शिष्य परम्परा तक ही सीमित थी तथा हर व्यक्ति के लिए उसे सीख पाना लगभग असम्भव सा था। उस शिक्षा को पं0 भातखण्डे जी और पं0 पलुस्कर जी ने संगीत विद्यालयों की स्थापना कर जन सुलभ बनाया। पं0 भातखण्डे व पं0 विष्णु दिगम्बर पलुस्कर द्वारा निर्मित स्वरलिपि पद्धतियों व रचित पुस्तकों के बारे में भी आप जान चुके होंगे। इसके अतिरिक्त आप यह भी जान चुके होंगे कि सदारंग–अदारंग द्वारा रचित ख्याल क्यों लोकप्रिय हुए?

2.5 शब्दावली

1. क्रियात्मक – व्यवहारिक/प्रयोगात्मक
2. लिपिबद्ध – स्वरलिपि में लिखित
3. अथक – लगातार
4. राजाश्रय – राजकृपा
5. वाग्गेयकार – शास्त्र पक्ष व क्रियात्मक पक्ष दोनों का जानकार
6. मींड़ – अटूट ध्वनि में एक स्वर से दूसरे स्वर में जाना। उदाहरण – सा से प तक मींड लेने में बीच के स्वरों का स्पर्श होता है किन्तु अलग से सुनाई नहीं देता।

2.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

(अ) वस्तुनिष्ठ प्रश्न :

1. **ख)** पं0 विष्णु नारायण भातखण्डे
2. **ग)** मुहम्मद शाह रंगीले
3. **क)** फिरोज खां
4. **ख)** पं0 विष्णु दिगम्बर पलुस्कर

(ब) रिक्त स्थानों की पूर्ति :

1. दस
2. पं0 वी0एन0 भातखण्डे
3. दिगम्बर गोपाल
4. पं0 बालकृष्ण बुआ इचलकरंजीकर
5. पुत्र

2.7 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. श्रीवास्तव, श्री हरीश चन्द्र, राग परिचय (भाग एक से पांच), संगीत सदन प्रकाशन, इलाहाबाद।
2. गोवर्धन, श्रीमती शान्ति, संगीत शास्त्र दर्पण।
3. वसन्त, संगीत विशारद, संगीत कार्यालय, हाथरस।
4. साभार गूगल।

2.8 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. *संगीत* मासिक पत्रिका, संगीत कार्यालय, हाथरस।
2. चौधरी, डा0 सुभाष रानी, *संगीत के प्रमुख शास्त्रीय सिद्धान्त,* कनिष्का पब्लिशर्स, नई दिल्ली।
3. बंसल, डॉ0 परमानन्द, *संगीत सागरिका,* प्रासंगिक पब्लिशर्स, नई दिल्ली।

2.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. पं0 भातखण्डे जी अथवा पं0 विष्णु दिगम्बर पलुस्कर जी का जीवन परिचय व सांगीतिक योगदान के बारे में लिखिए।
2. सदारंग–अदारंग का जीवन परिचय दीजिए।

इकाई 3 – संगीतज्ञों (पं0 ओमकारनाथ ठाकुर, उ0 फैयाज खां व पं0 भीमसेन जोशी) का जीवन परिचय

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 संगीतज्ञों का जीवन परिचय
3.3.1 पं0 ओमकार नाथ ठाकुर
3.3.2 उ0 फैयाज खां
3.3.3 पं0 भीमसेन जोशी
3.4 सारांश
3.5 शब्दावली
3.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
3.7 संदर्भ ग्रन्थ सूची
3.8 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
3.9 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0 संगीत के पाठ्यक्रम (बी0ए0एम0वी0–101) के द्वितीय खण्ड की तीसरी इकाई है। इससे पहले की इकाइयों में आपने पं0 विष्णु नारायण भातखण्डे, पं0 विष्णु दिगम्बर पलुस्कर व सदारंग–आदारंग के जीवन परिचय व उनके सांगीतिक योगदान के बारे में जाना। आप भारतीय संगीत के इतिहास, ख्याल व तानपुरा से भी परिचित हो चुके होंगे।

प्रस्तुत इकाई में देश के कुछ प्रतिष्ठित संगीतज्ञों (पं0 ओमकारनाथ ठाकुर, उ0 फैयाज खॉ व पं0 भीमसेन जोशी जी) के जीवन से आपको परिचित कराया जाएगा, जिन्होंने संगीत के प्रचार–प्रसार में अपना बहुमूल्य योगदान दिया।

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप इन प्रतिष्ठित संगीतज्ञों के व्यक्तित्व तथा संगीत के प्रचार–प्रसार में इनके योगदान के बारे में जान सकेंगे।

3.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात आप जान सकेंगे कि :–

- पं0 ओमकार नाथ ठाकुर, उ0 फैयाज खॉ तथा पं0 भीमसेन जोशी जी ने किन–किन विद्वानों से संगीत की शिक्षा ग्रहण की।
- इन संगीतज्ञों ने किन घरानों का प्रतिनिधित्व किया।
- इन संगीतज्ञों को कौन–कौन से सम्मान व पुरस्कार प्राप्त हुए।
- इन्होंने कौन–कौन सी रचना, पुस्तक व पत्रिकाएं इत्यादि लिखी हैं।

3.3 संगीतज्ञों का जीवन परिचय

इस इकाई में आप प्रतिष्ठित संगीतज्ञों (पं0 ओमकारनाथ ठाकुर, उ0 फैयाज खां व पं0 भीमसेन जोशी) के बारे में विस्तार से जान सकेंगे ।

3.3.1 पं0 ओमकारनाथ ठाकुर :–

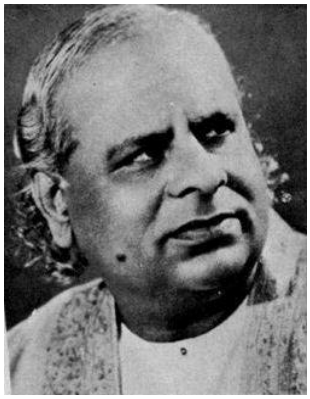

जन्म व शिक्षा – संगीत मार्तण्ड पं0 ओमकारनाथ ठाकुर का जन्म **24 जून 1897** को गुजरात प्रान्त में बड़ौदा के जहाज नामक गॉव में हुआ। आपके पिता का नाम श्री गौरी शंकर ठाकुर था, जो प्रणव (ओउम्) के परम उपासक थे। अतः उन्होंने अपने इस पुत्र का नाम ओमकार नाथ रखा।

आपकी बाल्यावस्था में आपका परिवार आर्थिक संकट से पीड़ित था। आपकी मॉ झवेरा को आपके पालन पोषण के लिए मजदूरी भी करनी पड़ी। आपको परिवार का पालन पोषण करने के लिए रामलीला में अभिनय करने के साथ–साथ एक मिल में काम भी करना पड़ा।

देश विदेश में भारतीय संगीत की कीर्ति फैलाने वाले संगीत मार्तण्ड पं0 ओमकारनाथ ठाकुर का महान व्यक्तित्व था। ईश्वर प्रदत्त मधुर आवाज के धनी पंडित जी संगीत की प्रत्येक महफिल में एक सिंह की तरह विजयी रहे। बाल्यकाल से ही आपका संगीत के प्रति विशेष लगाव था। अतः आर्थिक परिस्थितियां प्रतिकूल होते हुए भी आप सेठ शाहपुर जी मंचेरे डुग्गा की सहायता से पंडित विष्णु दिगम्बर पलुस्कर जी का शिष्यत्व ग्रहण करने में समर्थ हुए। अनवरत परिश्रम, गुरू जी की सेवा और संगीत के प्रति दृढ़ आस्था होने के कारण आपको शीघ्र ही संगीत जगत में ख्याति प्राप्त होने लगी। छः–सात वर्षों तक संगीत शिक्षा लेने के बाद, पं0 विष्णु दिगम्बर जी ने आपको सन् 1917 में गांधर्व महाविद्यालय का प्राचार्य बनाकर भेजा जहॉ आपने बड़ी तत्परता से अपना दायित्व निभाया। गायन के साथ–साथ व्याख्यान देने की कला में तथा वाग्गेयकार के रूप में भी आपकी एक अलग पहचान थी।

कार्य व यात्राएं – नेपाल नरेश आपके गायन से इतने प्रभावित हुए कि आपको तीन बार अपने यहॉ गाने के लिए सम्मानपूर्वक बुलाया। नेपाल के अतिरिक्त आपने इटली, फ्रांस, जर्मनी, इग्लैंड आदि देशों की यात्रा की और जहॉ भी गए भारतीय संगीत का मस्तक ऊॅचा किया। सन् 1952 में आप भारत सरकार द्वारा अफगानिस्तान भेजे गए, जहॉ पर आपने भारतीय सांस्कृतिक मंडल का नेतृत्व किया। आपने संगीत सम्बन्धी उच्च श्रेणी की कक्षाओं के लिए ग्रन्थ लिखे, जिनमें ''प्रणव भारती'' तथा ''संगीतांजली'' विशेष उल्लेखनीय हैं। आप ग्वालियर घराने से सम्बन्धित रहे। इन्होंने अपनी रचनाओं में अपना उपनाम 'प्रवण रंग' रखा। एच0एम0वी0 ने इनके अनेक डिस्क रिकार्ड तैयार किए, जो आज भी आकाशवाणी से प्रसारित होते हैं।

सम्मान व पुरस्कार :–

- सन् 1955 में भारत सरकार ने आपको **'पद्मश्री'** की उपाधि से सम्मानित किया।
- सन् 1940 में राजकीय संस्कृत महाविद्यालय कलकत्ता द्वारा आपको *'संगीत मार्तण्ड'*, की उपाधि प्रदान की गई।
- सन् 1943 में विशुद्ध संस्कृत महाविद्यालय काशी द्वारा आपको *'संगीत सम्राट'* की उपाधि से विभूषित किया गया।
- सन् 1950 में काशी हिन्दू महाविद्यालय में *'श्री कला संगीत भारती'* नाम से संगीत महाविद्यालय की स्थापना हुई और आपको इसका अध्यक्ष पद दिया गया। आपने यहॉ पर अनेक शिष्यों को तैयार किया।

आप तैरने के बहुत शौकीन थे। आपमें किसी प्रकार का कोई व्यसन नहीं था। विदेशों में भी आपने शाकाहारी जीवन जिया। जीवन के अन्तिम दिनों में आपको पक्षाघात हो गया था।

मृत्यु – **28 दिसम्बर 1967** को मॉ सरस्वती का यह शिष्य भारतीय संगीत जगत से हमेशा के लिए विदा हो गया।

3.3.2 उ0 फैयाज खां :–

जन्म व शिक्षा – उ0 फैयाज खां का जन्म सन् **1886** ई0 में आगरा के पास सिकन्दर नामक स्थान पर अपने नाना के घर में हुआ। आपके पिताजी 'सफदर हुसैन' आपके जन्म से तीन चार महीने पहले ही जन्नतनशी हो गए थे। अतः आपके नाना 'गुलाम अब्बास खॉ' साहब ने आपका पालन–पोषण किया। बाल्यकाल से 25 साल की उम्र तक इन्होंने ही आपको संगीत की तालीम दी। आपके नाना आगरा घराने के प्रतिष्ठित गायकों में से एक थे। आपके सम्बन्धी नत्थन खां तथा चाचा फिदाहुसैन खां कोटा वालों से भी आपको संगीत की तालीम हासिल हुई।

सम्मान व पुरस्कार – कुछ समय बाद आप मैसूर चले गए। वहीं सन् *1911* में आपको *आफताबे मौसीकी* की उपाधि मिली। तत्पश्चात आप बड़ौदा के दरबारी गायक नियुक्त हुए। जहॉ आपको *'ज्ञान रत्न'* की उपाधि प्राप्त हुई।

विशेषताएं – उस्ताद फैयाज खां ध्रुपद तथा ख्याल शैली के श्रेष्ठतम गायक थे। श्रोताओं के आग्रह से आप कभी–कभी गज़ल भी बड़ी खूबी के साथ पेश करते थे। आप ठुमरी भी लाजवाब तरीके से गाते

थे। आप आगरा घराने के प्रतिष्ठित गायक के रूप में प्रसिद्ध थे। अपनी रचनाओं में आपने अपना उपनाम *'प्रेम पिया'* रखा। आपको नोम–तोम के आलाप की सिद्धी थी।

आपका व्यक्तित्व बहुत प्रभावशाली था। आपकी आवाज सुरीली, बुलन्द और भरावदार थी। स्वरों पर स्थिर हो जाना, आपके गायन की प्रमुख विशेषता थी।

शिष्य परम्परा – उस्ताद जी की शिष्य परम्परा बहुत विशाल है, उसमें कुछ नाम इस प्रकार हैं– दिलीप चन्द्र वेदी, उ0 जिया हुसैन, अज़मल हुसैन, श्री कृष्णा रातंजन्कर इत्यादि।

मृत्यु – उ0 फैयाज खां **5 नवम्बर 1950** को बड़ौदा में स्वर्गवासी हो गए।

3.3.3 पं0 भीमसेन जीशी :–

जन्म व शिक्षा – पं0 भीमसेन जोशी का जन्म **14 फरवरी 1922**(रथसप्तमी) को हुआ। आपके पिता श्री गुरूनाथ जोशी को भीमसेन के रूप में पुत्र लाभ होना एक अद्भुत घटना थी। उन्होंने स्वप्न देखा कि वीर नारायण सामने हैं। उनके ऑसू बह निकले, कण्ठ भर आया, उनके मुॅह से निकला नारायण और तीसरे ही दिन आपका जन्म हुआ। पिता ने तीन माह बाद पुत्र का मुॅह देखा। उन्होंने उसी समय समझ लिया कि वह एक बड़ा संगीतज्ञ होगा।

पं0 भीमसेन जोशी बाल्यकाल से ही संगीत की ओर आकर्षित हो गए थे। भीमसेन के दादा श्री भीमाचार्य साधक व प्रवचनकार थे और स्वर साधना करते थे। भीमाचार्य के देहान्त के बाद भीमसेन ने अपने सातवे वर्ष में अपने दादा का धूल से भरा तानपुरा निकाला। भीमसेन को सबसे पहले 'रामाय रामभद्राय' सिखाया गया, इससे आपकी उन्नति होने लगी। भीमसेन घर के पास ही बहने वाली नदी, मस्जिद में होने वाली प्रार्थना तथा वाद्यों की आवाज के प्रति आकर्षित होते और घर से निकल पड़ते थे। आपकी हारमोनियम की शिक्षा, दस वर्ष की आयु में, अगसक चन्नप्पा (कुर्तफोटी) द्वारा राग भीमपलासी से शुरू हुई। भीमसेन इसमें मग्न हो गये और यह सिलसिला 7–8 महीनों तक चला। उसके पश्चात पं0 भीमसेन घर से भाग कर बंबई चले गए तथा बाद में वापस आ गए। बाद में आप संगीत सीखने के लिए पुनः घर से भागे। आपका विश्वास था कि दूर निकल जाने पर ही आपकी इच्छा पूरी होगी। वे नए स्थानों पर जाते और बड़े कलाकरों से कुछ न कुछ ग्रहण करते रहे। रामभाऊ कुंदगोलकर 'सवाई गन्धर्व' के सम्पर्क में आकर आपको संन्तोष मिला और संगीत की उच्च शिक्षा उन्हीं से ग्रहण की।

1944 में पं0 भीमसेन जी का विवाह हुआ। भीमसेन जी की संगीत के प्रति निष्ठा दिन प्रतिदिन बढ़ती रही।

विशेषताएं – पं0 भीमसेन जी किराना घराने के एक श्रेष्ठ गायक के रूप में जाने जाते हैं। बुलन्द आवाज, स्वर का सच्चा लगाव, राग–विस्तार, तान में विविधता और अद्भुत सुर–सौन्दर्य आपके गायन की प्रमुख विशिष्टताएं है। इन विशिष्टताओं के बल पर पं0 भीमसेन जी भारत के सर्वाधिक लोकप्रिय और श्रेष्ठ गायक सिद्ध हुए।

<u>सम्मान व पुरस्कार</u> :–

- सन् 1972 में पं भीमसेन जोशी को *'पद्मश्री'* अलंकार से विभूषित किया गया।
- इसके पश्चात् सन् 2008 में आपको **भारत रत्न** से सम्मानित किया गया।

<u>भारत रत्न</u>

<u>शिष्य परम्परा</u> – आपके प्रमुख शिष्यों – श्रीनिवास जोशी(पुत्र), जयतीर्थ मेंवुंड़ी, माधवा गुड़ी, श्रीपति पाड़ेगर, श्रीकांत देशपाण्ड़े, आनन्द भाटे, आशुतोष भारद्वाज आदि हैं।

<u>मृत्यु</u> – बहुत समय से चल रही बिमारी के कारण **24 जनवरी 2011** को आपने जीवन की अन्तिम सांस ली।

अभ्यास प्रश्न

अ) रिक्त स्थानों की पूर्ति :–

1. उपनाम 'प्रेम पिया' से ——————————————की रचनाऐं हैं।
2. पं0 ओमकारनाथ ठाकुर————————————— के शिष्य थे।
3. उ0 फैयाज खां —————————— घराने से सम्बन्धित थे।
4. पं0 भीमसेन जोशी का जन्म——————————— को हुआ।
5. पं0 ओमकारनाथ ठाकुर के पिता का नाम ———————— था।

ब) वस्तुनिष्ठ प्रश्न :–

1.'संगीत मार्तण्ड' की उपाधि से सम्मानित थे :

क) पं0 भीमसेन जोशी   ख) उ0 फैयाज खां
ग) पं0 विष्णु दिगम्बर पलुस्कर   घ) पं0 ओमकारनाथ ठाकुर

2.'भारत रत्न' उपाधि से विभूषित थे :

क) उ0 फैयाज खॉ   ख) पं0 जसराज
ग) पं0 भीमसेन जोशी   घ) गुलाम अब्बास खॉ

3.पं0 भीमसेन जोशी किस घराने से सम्बन्धित थे?

क) आगरा   ख) किराना
ग) ग्वालियर   घ) जयपुर

4.'प्रवण भारती' ग्रन्थ के लेखक :

क) पं0 ओमकारनाथ ठाकुर   ख) पं0 वी0एन0 भातखण्डे
ग) पं0 वी0डी0 पलुस्कर   घ) पं0 भीमसेन जोशी

5.संगीत मार्तण्ड पं0 ओमकारनाथ ठाकुर किस घराने से सम्बन्धित थे?

क) आगरा   ख) ग्वालियर
ग) जयपुर   घ) किराना

3.4 सारांश

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात आप भारतीय शास्त्रीय संगीत के महान संगीतज्ञों (पं0 ओमकारनाथ ठाकुर, उ0 फैयाज खां व पं0 भीमसेन जोशी) के सांगीतिक जीवन व इससे जुड़े महत्वपूर्ण तथ्यों के बारे में जान चुके होंगे। आप यह जान चुके होंगे कि इन संगीतज्ञों ने किन विषम परिस्थितियों में संगीत का प्रचार–प्रसार किया व किस तरह इसे जन–जन तक पहुँचाया। इस इकाई के अध्ययन के बाद आप यह भी जान चुके होंगे कि इनके द्वारा रचित संगीत सम्बन्धी ग्रन्थ जैसे 'प्रणव भारती' व 'संगीतांजली' किस तरह संगीत विद्यार्थियों के लिए उपयोगी है। भारतीय शास्त्रीय संगीत को संसार के कोने कोने तक पहुंचाने व लोकप्रिय बनाने में इन महान संगीतज्ञों का बहुत बड़ा योगदान है।

3.5 शब्दावली

1) प्रणव – ओम/ओंकार
2) अनवरत – लगातार
3) ज़न्नतनशी – स्वर्गवासी
4) तालीम – शिक्षा
5) मुकाम – दर्जा
6) अद्भुत – आश्चर्यजनक
7) निष्ठा – लगन
8) विभूषित – सम्मानित

3.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अ) रिक्त स्थानों की पूर्ति :–

1. उ0 फैयाज खां 2. पं0 विष्णु दिगम्बर पलुस्कर 3. आगरा
4. 14 फरवरी 1922 5. श्री गौरी शंकर ठाकुर

ब) वस्तुनिष्ठ प्रश्न :–

1.घ) पं0 ओमकारनाथ ठाकुर 2.ग) पं0 भीमसेन जोशी 3.ख) किराना
4.क) पं0 ओमकारनाथ ठाकुर 5.ख) ग्वालियर

3.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. श्रीवास्तव, श्री हरीश चन्द, *राग परिचय (भाग 2 व 3)*, संगीत सदन प्रकाशन, इलाहाबाद।
2. 'वसन्त', *संगीत विशारद*, संगीत कार्यालय, हाथरस।
3. गर्ग, डॉ0 लक्ष्मीनारायण, *हमारे संगीत रत्न*, संगीत कार्यालय, हाथरस।
4. साभार गूगल।

3.8 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. *संगीत* मासिक पत्रिका, संगीत कार्यालय, हाथरस।
2. चौधरी, डा0 सुभाष रानी, *संगीत के प्रमुख शास्त्रीय सिद्धान्त*, कनिष्का पब्लिशर्स, नई दिल्ली
3. बंसल, डॉ0 परमानन्द, *संगीत सागरिका*, प्रासंगिक पब्लिशर्स, नई दिल्ली।

3.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. 'संगीत मार्तण्ड' पं0 ओमकार नाथ ठाकुर अथवा पं0 भीमसेन जोशी का पूर्ण परिचय दीजिए।

इकाई 1 – भातखण्डे स्वरलिपि पद्धति का परिचय, राग यमन – परिचय एवं ख्याल(विलम्बित व मध्यलय) बन्दिशों को लिपिबद्ध करना; राग भैरव व बिलावल का परिचय एवं मध्यलय ख्याल को लिपिबद्ध करना; पाठ्यक्रम के रागों में ध्रुवपद दुगुन सहित

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 स्वरलिपि पद्धति का ज्ञान
1.4 भातखण्डे स्वरलिपि पद्धति
1.4.1 स्वर चिन्ह 1.4.3 स्वर मान
1.4.2 सप्तक चिन्ह 1.4.4 स्वर सौन्दर्य के चिन्ह
1.5 रागों में ख्याल बंदिशों को लिपिबद्ध करना
1.5.1 राग यमन का परिचय एवं बंदिश
1.5.2 राग भैरव का परिचय एवं बंदिश
1.5.3 राग बिलावल का परिचय एवं बंदिश
1.6 रागों में ध्रुवपद बंदिशें लिपिबद्ध करना
1.6.1 ध्रुवपद गायन का संक्षिप्त परिचय
1.6.2 राग यमन में ध्रुवपद एवं उसकी दुगुन
1.6.3 राग भैरव में ध्रुवपद एवं उसकी दुगुन
1.7 सारांश
1.8 शब्दावली
1.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
1.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
1.11 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
1.12 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0 संगीत के पाठ्यक्रम (बी0ए0एम0वी0–101) के तृतीय खण्ड की पहली इकाई है। इससे पहले की इकाईयों के अध्ययन के बाद आप बता सकते हैं कि संगीत के अन्तर्गत विभिन्न प्रकार के गायन में स्वर एवं ताल द्वारा प्रस्तुतिकरण किया जाता है। विभिन्न गीत रचनाओं से रागों को सजाया जाता है।

इस इकाई में स्वरलिपि पद्धति के विषय में सविस्तार वर्णन प्रस्तुत किया गया है। इस पद्धति में बंदिशों एवं गीतों को लिपिबद्ध करना भी प्रस्तुत इकाई में सविस्तार समझाया गया है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप स्वरलिपि पद्धति के महत्व को समझ सकेंगे तथा वर्तमान शिक्षण प्रणाली इसके द्वारा जिस प्रकार सुविधाजनक हो गई है वह भी जान सकेंगे। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप विभिन्न रागों के स्वरूप एवं गीत रचनाओं को स्वरलिपि बद्ध कर लिखित रूप में उसका ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

1.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात आप :–

- बता सकेंगे कि संगीत में स्वरलिपि पद्धति क्यों प्रयोग की जाती है।
- समझा सकेंगे कि स्वरलिपि पद्धति द्वारा संगीत में रागों, बंदिशों, स्वर सौन्दर्य को लिखित रूप में सर्वसुलभ बनाया जा सकता है।
- रागों में बद्ध रचनाओं को सुनकर स्वयं स्वरलिपि बद्ध करने में समर्थ हो सकेंगे। जिससे नवीन रचनाओं को समझा सकेंगे।

1.3 स्वरलिपि पद्धति का ज्ञान

भारतीय संगीत के क्षेत्र में स्वरलिपि पद्धति के जन्म से नई क्रान्ति का सूत्रपात हुआ। आधुनिक काल में संगीत का जिस प्रकार प्रचार–प्रसार हो रहा है उसका एक मात्र कारण है– स्वरलिपि मूलक संगीत शिक्षा की व्यवस्था। प्राचीनकाल से मध्यकाल तक मुख्य रूप से गुरू–शिष्य परम्परा द्वारा गुरू के सम्मुख शिक्षा दी जाती थी। इस समय स्वरलिपि पद्धति का चलन न होने से शिक्षण पद्धति में सभी कुछ कंठस्थ करना होता था। मौलिक रूप में संगीत शिक्षण दिया जाता था। मध्यकाल के पश्चात आधुनिक काल के पूर्वार्ध में प्रसिद्ध संगीतज्ञ पं0 विष्णु नारायण भातखंडे एव पं0 विष्णु दिगम्बर पलुस्कर के प्रयासों के द्वारा स्वरलिपि पद्धति का जन्म हुआ। जिससे संगीत शिक्षण अत्यन्त सुविधाजनक हो गया। स्वरलिपि के आधार पर संगीत की शिक्षा अधिक वैज्ञानिक हो गयी है।

वर्तमान समय में जो संगीत का प्रचार–प्रसार तीव्र गति से हुआ है उसका एक महत्वपूर्ण कारण स्वरलिपि मूलक संगीत शिक्षण का चलन भी है। स्वरलिपि का स्थान संगीत शिक्षण में महत्वपूर्ण है। स्वरलिपि पद्धति के जन्म से पूर्व विद्यार्थी एवं शिष्य, गुरू से प्राप्त ज्ञान को कंठस्थ कर लय–ताल के साथ गेय पदों का गायन करता था, परन्तु इसमें बहुत अधिक समय लगता था क्योंकि जब तक शिष्य को गुरू द्वारा लिया गया पाठ कंठस्थ नहीं होता था तब तक उसे सीखते रहना पड़ता था। इतना होते हुए भी संगीत सीखने के पश्चात भी शिष्य को रागों के विषय में पूर्ण ज्ञान नहीं हो पाता था। गायन–वादन का प्रदर्शन करने हेतु यह उचित है परन्तु इससे रागों का शास्त्रीय ज्ञान उतना नहीं हो पाता था जितना वर्तमान में स्वरलिपि पद्धति के कारण सम्भव हो सका है। आधुनिक काल में स्वरलिपि पद्धति के कारण संगीत शिक्षण अत्यन्त सुविधाजनक एवं सर्वसुलभ हो गया है। विद्यालयीन संगीत शिक्षा में स्वरलिपि पद्धति द्वारा बहुत कम समय में संगीत शिक्षक एक ही साथ बहुत अधिक विद्यार्थियों को भली–भांति संगीत शिक्षा दे सकते हैं। संगीत शिक्षक विद्यार्थियों को प्रयोगात्मक रूप से राग एवं अन्य रचनाओं को सिखाने से पूर्व इनके गीतों की स्वरलिपि लिखवा देते हैं तथा इसके उपरान्त गेय रचना की पंक्तियों को स्वरलिपि के अनुसार गाकर समझाते हैं, जिसका अनुकरण सभी छात्र करते हैं। इस पद्धति से सरलतापूर्वक विद्यार्थी लगन से अपने पाठ को सीखते हैं। स्वरलिपि पद्धति के द्वारा गीत के विभिन्न अंग स्थायी, अन्तरा आदि के प्रत्येक अव्यव में स्वरों का प्रयोग होता है तथा स्वरों में विश्रान्ति के स्थानों को भी विद्यार्थी भली–भांति समझ लेते हैं। मात्र प्रयोगात्मक दृष्टि से अगर स्वरलिपि का आश्रय न लेते हुए संगीत शिक्षण किया जाता है तब उसमें अधिक समय की आवश्यकता होती ही है। साथ में इस विषमता से गायन व वादन में वैज्ञानिकता का भी ह्रास होने लगता है।

पुराने समय में गुरू शिष्य परम्परा में केवल गा–बजा कर ही संगीत शिक्षण होता आया है। परन्तु वर्तमान समय में यह सम्भव नहीं है। आज कल घरानेदार संगीत शिक्षण में भी स्वरलिपि पद्धति का पूर्ण रूप से प्रयोग होने लगा है क्योंकि आज गुरू एवं शिष्य दोनों के पास ही संगीत शिक्षण हेतु अधिक समय नहीं रहता तथा शिष्य को गुरू के सम्मुख सीखने के पश्चात अभ्यास हेतु यह अत्यन्त आवश्यक हो जाता है कि वह अपने सबक को लिपिबद्ध करके निरन्तर उसका गायन, वादन कर सके। विद्यालयों में स्वरलिपि पद्धति के अभाव में संगीत शिक्षण असम्भव है क्योंकि यहाँ एक ही कक्षा में बहुत विद्यार्थी होते हैं जिन्हें अलग–अलग प्रयोगात्मक रूप से सिखाने के लिए बहुत अधिक समय की आवश्यकता होती है।

1.4 भातखण्डे स्वरलिपि पद्धति

हिन्दुस्तानी संगीत में भातखण्डे स्वरलिपि पद्धति उत्तम मानी जाती है। इसे लिखना एवं पढ़ना विष्णु दिगम्बर पलुस्कर पद्धति की अपेक्षा सरल एवं सुगम है। दक्षिण भारत में पलुस्कर पद्धति का चलन है परन्तु उत्तर भारत में मुख्य रूप से भातखण्डे स्वरलिपि पद्धति का प्रयोग होता है।

भातखण्डे स्वरलिपि पद्धति में स्वर चिन्ह, स्वर मान एवं गीत को लिपिबद्ध करने से पूर्व इसके चिन्हों को समझना होगा।

1.4.1 स्वर चिन्ह :

(i) शुद्ध स्वरों के लिए इस पद्धति में कोई चिन्ह नहीं होता है।
जैसे – **रे ग म प** स्वर चिन्ह रहित हैं अर्थात यह शुद्ध हैं।

(ii) कोमल स्वरों के लिए स्वर के नीचे आड़ी रेखा खींच दी जाती है।
जैसे – **रे ग ध** यह स्वर कोमल कहलाते हैं।

(iii) तीव्र स्वर जो मात्र 'म' स्वर ही होता है इसको दर्शाने के लिए 'म' स्वर के ऊपर एक खड़ी रेखा खींच दी जाती है।
जैसे– **म'**

1.4.2 सप्तक चिन्ह :

(i) सप्तक को दर्शाने के लिए भी निम्न चिन्ह होते हैं। मध्य सप्तक के स्वरों में कोई चिन्ह नहीं होता है। जैसे– **रे ग म।** यह स्वर, चिन्ह रहित होने से मध्य सप्तक के स्वर कहलाएगें।

(ii) मन्द्र सप्तक के स्वरों को दर्शाने के लिए स्वरों के नीचे एक बिन्दु लगा दिया जाता है। जैसे– **नी़ ध़ प़।** यह स्वर मन्द्र सप्तक के हैं।

(iii) तार सप्तक के स्वरों के लिए स्वरों के ऊपर एक बिन्दु लगा देते हैं। जैसे– **गं मं पं।** इन स्वरों को तार सप्तक के स्वर कहेंगे।

1.4.3 स्वर मान :

स्वर मान के लिए निम्न चिन्हों से इन्हें दर्शाया जाता है :

- 1 मात्रा के लिए कोई चिन्ह नहीं होता है, जैसे – स
- **1½** मात्रा को दर्शाने के लिए – स–रे
- 2 मात्रा को दर्शाने के लिए – स– रे–
- ½ मात्रा को दर्शाने के लिए – रे ग म प
- ⅓ मात्रा को दर्शाने के लिए – रे ग म
- $_{1/6}$ मात्रा को दर्शाने के लिए – रेगमपधप

1.4.4 स्वर सौन्दर्य के चिन्ह :

(i) स्वर सौन्दर्य को दर्शाने के लिए स्वर में निम्न प्रकार चिन्ह लगाए जाते हैं। मींड को दर्शाने के लिए स्वरों के उपर अर्द्धचन्द्राकार चिन्ह लगाते हैं, जैसे– **प ग**

(ii) कण स्वर को दर्शाने के लिए मुख्य स्वर के ऊपर कण स्वर को सूक्ष्म रूप में लिख देते हैं, जैसे – म
प

(iii) खटका को दर्शाने के लिए स्वर को कोष्ठक में लिखते हैं, जैसे – **(प)।** खटका का अर्थ यह है कि मुख्य स्वर के आगे व पीछे के स्वर को लिया जाता है, जैसे – (प) को दर्शाया है तब उसको इस प्रकार लेगे *(ध प म प)।*

(iv) गीत उच्चारण के लिए निम्न चिन्ह प्रयुक्त किए जाते हैं, जैसे– **श या ऽ ऽ म**

स्वरलिपि पद्धतियों का विशेष महत्व है परन्तु भारतीय शास्त्रीय संगीत की पूर्ण अभिव्यक्ति के लिए या किसी भी रचना को पूर्ण रूप से लिपिबद्ध करना किसी भी स्वरलिपि पद्धति के लिए असंभव है।

भातखण्डे स्वरलिपि पद्धति में नाद के छोटे–बड़े पन को दर्शाने के लिए कोई चिन्ह प्रयोग में नहीं आता है। गमक के प्रयोग हेतु स्वरलिपि पद्धतियों में कोई स्पष्ट चिन्ह नहीं है। भारतीय रागों में स्वरों का विशेष महत्व है। एक ही स्वर अनेक रागों में विभिन्न रूपों में लगता है, परन्तु इसके लिए स्वरलिपि पद्धतियों में कोई चिन्ह नहीं है, जैसे–राग दरबारी कान्हड़ा, मियां मल्हार, मुलतानी रागों में कोमल गन्धार प्रयुक्त होता है, परन्तु तीनों रागों के कोमल गन्धार विभिन्न प्रकार से लगते हैं।

अभ्यास प्रश्न

1) लघु उत्तरीय प्रश्न :

(i) स्वरलिपि पद्धति का संक्षेप में वर्णन कीजिए।

(ii) भातखण्डे स्वरलिपि पद्धति में स्वर चिन्हों को बताइए।

2) एक शब्द में उत्तर दीजिए :

(i) कोमल स्वरों में कौन सा चिन्ह प्रयोग होता है?

(ii) तार सप्तक के स्वरों के ऊपर कौन सा चिन्ह लगाते हैं?

(iii) मींड़ दर्शाने के लिए किस प्रकार का चिन्ह लगाते हैं?

3) सत्य/असत्य बताइए :

(क) तीव्र मध्यम में स्वर के नीचे रेखा लगती है।

(ख) मध्य सप्तक के लिए स्वरों में कोई चिन्ह नहीं लगता है।

(ग) मन्द्र सप्तक में स्वरों के ऊपर बिन्दु लगाते हैं।

(घ) हिन्दुस्तानी संगीत में स्वरलिपि पद्धति के अन्तर्गत भातखण्डे स्वरलिपि पद्धति सबसे प्रमुख है।

1.5 रागों में ख्याल बंदिशों को लिपिबद्ध करना

भातखण्डे स्वरलिपि पद्धति के विषय में आप जान चुके हैं। अब हम इस लिपि को पूर्ण रूप से उदाहरणों सहित जानेंगे। पाठ्यक्रम से सम्बन्धित रागों के अन्तर्गत विभिन्न बंदिशों को लिपिबद्ध करने से आप स्वरलिपि पद्धति के प्रयोग को पूर्ण रूप से जान सकेंगे। बंदिशों को स्वरलिपि बद्ध करने से पूर्व उन रागों का पूर्ण परिचय जानेंगे जो राग पाठ्यक्रम में स्वरलिपि बद्ध करने हेतु निर्धारित हैं।

1.5.1 राग यमन का परिचय एवं बंदिशें :

थाट	–	कल्याण
जाति	–	सम्पूर्ण–सम्पूर्ण
वादी, संवादी	–	गन्धार(ग), निषाद (नि)
गायन समय	–	रात्रि का प्रथम प्रहर
समप्रकृति राग	–	शुद्ध कल्याण, यमनी बिलावल
आरोह	–	सा रे, ग, म' प, ध नि, सा
अवरोह	–	सां नि ध प, म' ग, रे सा
पकड़	–	नि़ रे ग, रे ग म' प, म' ग, रे सा

परिचय – राग यमन, कल्याण थाट का रागांग राग है। रागांग का अर्थ है जो राग अपने थाट के सबसे महत्वपूर्ण राग होते हैं। इस राग को 'कल्याण' नाम से भी जाना जाता है। कहा जाता है मुसलमानों के शासन काल के दौरान 'कल्याण' राग का नाम 'यमन' पड़ गया। यमन राग 'कल्याण' थाट का राग है। यह आश्रय राग भी है क्योंकि राग का नाम एवं थाट का नाम एक ही है तथा रागों की उत्पत्ति थाटों से होती है। इस राग की जाति सम्पूर्ण है क्योंकि राग में सातों स्वरों का प्रयोग होता है। राग में वादी स्वर गन्धार है अर्थात राग का सबसे महत्वपूर्ण स्वर। इस स्वर में सबसे अधिक ठहरा जाता है। इसके बाद का महत्वपूर्ण स्वर संवादी कहलाता है जो कि निषाद स्वर है। राग में वर्जित स्वर शुद्ध मध्यम है क्योंकि राग में तीव्र मध्यम का ही प्रयोग होता है।

राग का मुख्य स्वर विस्तारः

नि़ रे ग, रे सा, म' प, ग म' प, म' ग रे सा, म' ध नि, ध प, सां नि ध नि, ध प म' ग, म' ध नि नि सां, ध नि रें सां, सां नि ध नि ऽ ध प, प म' ग, म' ग रे ग, म' ग रे सा नि़ ध़ नि़ रे सा। नि़ रे ग, म' ध नि ध प, म' ध प म', रे ग म' ग, म' ग रे ग रे सा।

राग यमन– विलम्बित ख्याल (एकताल)

स्थाई – मेरा मन बाँध लीनो रे हाँ रे इन जोगीया के साथ
अन्तरा – सदारंग करम करो क्यूं न इन प्राननाथ के हाथ

स्थाई

नि	प़	नि़ ध़	सारे	सा	–	नि़	रे	ग	रे	सा	(सा)
मे	रा	ऽऽ	मन	बाँ	ऽ	ऽ	ध	ली	नो	रे	ऽ
निनि	(प)	रे	म'म'	प	(प)	ग	रे	ध़	नि़	सा	सा
हाँऽ	रे	ऽ	इन	जो	गी	या	के	सा	ऽ	ऽ	थ
3		4		X		0		2		0	

अन्तरा

ग	म'	प	ध	निनि	(प)	म'ग	गप	ग	रे	[न]सारे	स
स	दा	रं	ग	कऽ	रऽ	मऽ	कऽ	रो	ऽ	क्यूंऽ	न
नि़	रे	ग	म'	निनि	(प)	म'ग	प	रे	नि़	रे	सा
इ	न	प्रा	ऽ	नऽ	ना	ऽऽ	थ	के	हा	ऽ	थ
3		4		X		0		2		0	

राग यमन – मध्यलय ख्याल (तीनताल)

स्थाई – ऐरी आली पिया बिन सखी कलना परत मोहे घरी पल जिन दिन
अन्तरा – जब तें पिया परदेस गवन कीनो रतियाँ कटत मोहे तारे गिन गिन

स्थाई

		प	गम'	नि	ध	प	–	–	रे	–	सा	ग	रे	ग	ग
		अ	रीऽ	ए	ऽ	री	ऽ	ऽ	आ	ऽ	ली	पि	या	बि	न
–	–	प	पे	ग	म'	ग	प	प	ध	प	प	नि	ध	प	प
ऽ	ऽ	स	खि	क	ल	ना	प	र	त	मो	हे	घ	री	प	ल
रे	रे	सा	सा	नि	नि	(प)	–								
जि	न	दि	न	ये	ऽ	री	ऽ								
2				0				3				x			

अन्तरा

प	प	सां	सां	सां	–	सां	सां	सां	(सां)	नि	ध	नि	ध	प	प
ज	ब	तें	पि	या	ऽ	प	र	दे	ऽ	स	ग	व	न	की	नो
प	गं	रें	सां	नि	ध	प	प	ध	नि	ध	प	रे	रे	सा	सा
र	ति	याँ	क	ट	त	मो	हे	ता	ऽ	ऽ	रे	गि	न	गि	न
0				3				x				2			

1.5.2 राग भैरव का परिचय एवं बंदिश :

थाट	–	भैरव
जाति	–	सम्पूर्ण–सम्पूर्ण
वादी, संवादी	–	धैवत, ऋषभ (ध, रे)
गायन समय	–	प्रातःकाल का प्रथम प्रहर
समप्रकृति राग	–	कलिगड़ा, अहिर भैरव
आरोह	–	सा रे, ग म प, ध, नि सां
अवरोह	–	सां नि ध, प, म ग रे, सा
पकड़	–	ग म$^{नि}$ ध, $^{नि}$ध, प, ग म रे, रे सा

परिचय – राग भैरव रागांग राग है तथा यह आश्रय राग भी है क्योंकि राग एवं थाट का नाम एक ही है। भैरव थाट से अनेक रागों की उत्पत्ति हुई है। सातों स्वर लगने से राग की जाति सम्पूर्ण है। यह उत्तरांग प्रधान राग है क्योंकि इसका मुख्य स्वर धैवत है जो कि वादी स्वर है। यह प्रातःकालीन संधि प्रकाश राग है। भैरव राग शुद्ध राग है इसमें किसी अन्य राग का मिश्रण नहीं है। प्रारम्भिक विद्यार्थियों के लिए यह राग सरल लगता है परन्तु जैसे–जैसे राग की गहराई में जाओ इसकी जटिलता एवं स्वर लगाव का पता चलता है। राग के धैवत एवं ऋषभ स्वर में आन्दोलन होता है।

मुख्य स्वर समूह :

सा^{ग} रे^{ग}रे सा, ध़ नि़ सा, रे़ रे़ सा, ध़ नि़ सा, सा रे़ रे़ ग म मप, प ग म रेग रे़, ग म रे़ रे़ सा। ग म$^{नि}$ ध़ $^{नि}$ध़ ध़ प, ग म प ग म रे़, ग म ध़, ध़, प ध़ नि नि ध़ ध़ प, ग म प म रे़, रे़ सा म प$^{नि}$ ध़ $^{नि}$ध़ प, ध़ म प, ग म ध़, ध़ नि ध़, सां ध़ नि ध़, ध़ प, ग म रे़ सा ।

राग भैरव– मध्यलय ख्याल (तीनताल)

स्थाई–धन धन मूरत कृष्ण मुरारी सुलछन गिरिधारी छवि सुन्दर लागे अति प्यारी

अन्तरा–बंसीधर मन मोहन सुहावे, बलि बलि जाँऊ मोरे मन भावे सबरंग ज्ञान विचारी

स्थाई

ग	म	ध	ध	पम	प	म	ग	रे	–	मग	(म)	रे	–	सा	–
ध	न	ध	न	मूऽ	ऽ	र	त	कृ	ऽ	ष्णऽ	मु	रा	ऽ	री	ऽ
सा	ध	–	नि	सा	सा	सा	सा	रे	–	सा	–	नि	सा	ग	म
सु	ल	ऽ	च्छ	ऽ	न	गि	रि	धा	ऽ	री	ऽ	छ	बि	सूं	ऽ
प	प	ध	–	सां	–	ध	प	पध	निसां	सांरें	सांनि	धनि	धप	मग	म
द	र	ला	ऽ	गे	ऽ	अ	ति	प्याऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	री
0				3				X				2			

अन्तरा

प	–	प	–	ध	ध	नि	नि	सां	सां	सां	सां	नि	सां	सां	–
बं	ऽ	सी	ऽ	ध	र	म	न	मो	ह	न	सु	हा	ऽ	वे	ऽ
रें	रें	मं	मं	रें	–	सां	–	सां	सां	रें	सां	ध	–	प	–
ब	लि	ब	लि	जा	ऽ	ऊँ	ऽ	मो	रे	म	न	भा	ऽ	वे	ऽ
ग	म	ग	म	प	–	ध	प	पध	निसां	सांरें	सांनि	धनि	धप	मग	म
स	ब	रं	ग	ज्ञा	ऽ	न	बी	चाऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	री
0				3				X				2			

1.5.3 राग बिलावल का परिचय एवं बंदिश :

थाट	–	बिलावल
जाति	–	सम्पूर्ण, सम्पूर्ण
वादी, संवादी	–	धैवत, गन्धार (ध, ग)
गायन समय	–	दिन का प्रथम प्रहर
समप्रकृति राग	–	देवगिरि बिलावल, यमनी बिलावल
आरोह	–	स रे ग, म रे ग प ध, नि सां
अवरोह	–	सां नि ध, प, म ग म रे सा
पकड़	–	ग म रे ग प, $^{नि}$ध नि सां ध प।

परिचय – राग बिलावल आश्रय राग अर्थात बिलावल थाट का ही राग है। रागांग पद्धति के अनुसार समस्त बिलावल के प्रकारों में यह रागांग राग है। इस राग की गायकी में वक्र स्वर समूहों की संगति अधिक है। राग अल्हैया बिलावल उत्तरांग प्रधान राग है। राग बिलावल में मात्र कोमल निषाद का प्रयोग करके अल्हैया बिलावल राग बना है। अनेक विद्वान इस राग को अल्हैया बिलावल भी कहते हैं। बिलावल राग में भी कोमल निषाद अल्प मात्रा में प्रयोग होता है इसलिए अधिकतर विद्वान उसे अल्हैया बिलावल राग मानते हैं। भातखण्डे जी ने भी बिलावल राग में कोमल निषाद का प्रयोग किया है। इसलिए अल्हैया बिलावल राग को बिलावल ही माना जा सकता है। यह राग अत्यन्त कर्णप्रिय राग है। प्रचार में शुद्ध बिलावल और अल्हैया बिलावल अलग–अलग मानकर गाने वाले गायक बिरले ही हैं। गायक से बिलावल गाने को कहते ही वह विशेष रूप से ही अल्हैया बिलावल ही गाता है।

मुख्य स्वर समुदायः

सा रे ग, म रे सा, सा ग रे ग प, ध प म ऽ ग, म रे ग प, ग प ध नि सां, सां ध ध प, ध ग प म ऽ ग, ग प धनि सां ध प, ध म ग, म प म ग म रे सा। ग रे ग प म ग म रे सा, प नि धनि सां ध प, ग प ध नि ध[नि] ध प ध म ग, ग प ध नि सां, ध प म ग म रे सा ऩि ध़ नि सा।

बिलावल– मध्यलय ख्याल (तीनताल)

स्थाई– रब सों नेह लगाय तु मनवा दूजो नांहि शरनवा

अन्तरा– साँचो सुखी कोऊ जग में नहि सत हर रंग मान बचनवा

स्थाई

सां	सां	ध	निप	ग	गम	प	म	ग	–	मरे	सा	सा	रे	सा	–
र	ब	सों	ऽऽ	ने	ऽऽ	ह	ल	गा	ऽ	ऽऽ	तु	म	न	वा	ऽ
सा	–	र	मरे	ग	प	नि	नि	सां	सां	सांसां	गरें	सारें	सांनि	धप	मग
दू	ऽ	जो	ऽऽ	ना	ऽ	हिं	श	र	न	वाऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ
0				3				x				2			

अन्तरा

प	–	नि	नि	सं	–	सां	सां	सां	गं	गं	मं	गं	रें	सां	सां
साँ	ऽ	चो	सु	खी	ऽ	को	उ	ज	ग	मे	न	दी	ऽ	स	त
गं	मं	पं	मंगं	मं	रें	सां	सां	नि	नि	सांसां	गरें	सारें	सांनि	धप	मग
ह	र	रं	गऽ	मा	ऽ	न	ब	च	न	वाऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ
0				3				x				2			

अभ्यास प्रश्न

1) लघु उत्तरीय प्रश्न :

(i) राग भैरव का परिचय दीजिए।

(ii) राग यमन में लगने वाले स्वरों का विवरण दीजिए।

2) एक शब्द में उत्तर दीजिए :

(i) राग बिलावल में कौन सा स्वर कोमल लगता है?

(ii) राग यमन का गायन समय कौन सा है?

3) सत्य/असत्य बताइए :

(क) राग भैरव का वादी स्वर धैवत है।

(ख) राग बिलावल का गायन समय रात्रि का प्रथम प्रहर है।

(ग) राग यमन में तीव्र मध्यम लगता है।

4) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :

(i) राग भैरव में धैवत .... लगता है।

(ii) भैरव का गायन समय .... का प्रथम प्रहर है।

(iii) राग यमन की जाति .... है।

1.6 रागों में ध्रुवपद बंदिशें लिपिबद्ध करना

1.6.1 ध्रुवपद गायन का संक्षिप्त परिचय – ध्रुवपद की बंदिशें एवं उसकी लयकारी को समझने से पूर्व यह आवश्यक है कि हम ध्रुवपद गायन के विषय में एक संक्षिप्त परिचय जान लें।

भारतवर्ष में मध्यकाल से वर्तमान तक ध्रुवपद का प्रचार निरन्तर प्रचलन में है। प्राचीन समय में प्रबन्ध गायन से इसका प्रादुर्भाव हुआ। ध्रुवपद में स्वर, लय तथा साहित्य तीनों अंगों का समुचित संयोग अपेक्षित रहा है। भरत काल में ध्रुवा गीतों का उल्लेख प्राप्त होता है। इन्हीं ध्रुवा गीतों में शनै–शनै परिवर्तन स्वरूप मध्यकालीन ध्रुवपदों का विकास हुआ। ध्रुवपद का आधुनिक नाम ध्रुपद हो गया है। यह दो शब्दों के मेल से बना है ध्रुव तथा पद। ध्रुव का अर्थ होता है 'नियत' या 'दृढ़' तथा पद वह है 'जो गाए जाने योग्य हो'। इस प्रकार नियत पद जिसमें परिवर्तन सम्भव न हो वही ध्रुवपद है।

मध्यकाल में ध्रुवपद गायन अपने चरम पर था। ग्वालियर के राजा मान सिंह ध्रुवपद गायन के विशिष्ट उन्नायकों में थे। तानसेन, बैजू, स्वामी हरिदास, नायक बख्शू आदि इस शैली के सर्वोच्च गायक रहे हैं।

ध्रुवपद गम्भीर प्रकृति की गायकी है। इसे मर्दाना गायकी भी कहा जाता है। अकबर के दरबारी अबुल फजल के अनुसार, "ध्रुवपद का विषय विशेष रूप से पौरूषवान एवं गुणवान व्यक्तियों की प्रशंसा करना है।"

मध्यकाल में ध्रुवपद के तीन खण्ड अथवा धातु होते थे। ये क्रमशः उदग्राह, ध्रुवक तथा आभोग थे। वर्तमान में ये स्थायी, अन्तरा, संचारी एवं आभोग कहलाते हैं। कई ध्रुवपदों में मात्र स्थाई एवं अन्तरा दो भाग ही होते हैं। ध्रुपद गायन में सर्वप्रथम नोम–तोम की आपालचारी से इसका प्रारम्भ होता है। इसके पश्चात बंदिश, लयकारी तथा उपज की जाती है। ख्याल गायन की भांति आकार में द्रुत गति की तानबाजी इस गायकी में वर्जित है। ध्रुवपद गायन में बोलतान, गमक तान, मींड, आन्दोलन आदि का प्रयोग होता है। सर्वप्रथम गीत प्रारम्भ करने से पूर्व नोम–तोम का आलाप किया जाता है तथा गीत आरम्भ कर उसके शब्दों का आलाप किया जाता है। पद रचना के आलाप क्रमशः बढ़त तथा उपज दोनों अंगों से किए जाते हैं। बढ़त में शब्दों की विभिन्न रचनाऐं प्रस्तुत की जाती हैं तथा उपज में दुगुन, तिगुन, चौगुन, आड़, कुआड़ आदि लयकारियों द्वारा ध्रुवपद गायकी और प्रभावशाली बन जाती है।

ध्रुपद गायन में लयकारी पक्ष बहुत महत्वपूर्ण है। इसी के माध्यम से ध्रुवपद गायन में नवीन सौन्दर्य उत्पन्न हो जाता है। विभिन्न क्लिष्ट लयकारियों के द्वारा ध्रुवपद गायन में चमत्कार उत्पन्न किया जाता है। ध्रुवपद गायन में विशेष रूप से पखावज की संगत होती है क्योंकि पखावज के बोल खुले होने के कारण इस गायकी की गम्भीरता से पूर्ण मेल खाते हैं। इसमें निम्न तालों का प्रयोग होता है, जैसे – चौताल, आड़ाचौताल, सूलताल, रूद्र इत्यादि। कुछ रचनाओं में झंपा एवं तीवरा तालों का प्रयोग भी होता है परन्तु वर्तमान में ध्रुपद गायन में विशेष रूप से चौताल, सूलताल एवं तीवरा का अधिक प्रयोग होता है।

1.6.3 राग यमन में ध्रुवपद एवं उसकी दुगुन :

राग यमन – चौताल

स्थाई – जय मुकुन्द मधुसूदन राधा रमण हरि आनन्द कन्द गोविन्द गिरिधारी।
अन्तरा – गोपी गोप पति ब्रज पति त्रिभुवन पति, देवन पति रास रसिक मुरली कर धारी।

स्थाई

प	म'	ग	म'	ध	नि	सां	नि	ध	प	म'	प
ज	य	मु	कु	ऽ	न्द	म	धु	ऽ	सू	द	न
प	नि	ध	प	ध	प	म'	रे	–	ग	–	ग
रा	ऽ	ऽ	धा	ऽ	र	म	न	ऽ	ह	ऽ	रि

ग	रे	सा	नि़	–	ध़	नि़	रे	ग	ग	–	ग
आ	ऽ	ऽ	न	ऽ	न्द	क	ऽ	ऽ	न्द	ऽ	गो
म'	ध	नि	सां	नि	ध	प	–	रे	ग	रे	सा
वि	ऽ	न्द	गि	ऽ	रि	धा	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	री
X		0		2		0		3		4	

अन्तरा

म'	–	ग	म'	–	ध	सां	–	सां	रें	सां	–
गो	ऽ	ऽ	पी	ऽ	ऽ	गो	ऽ	प	प	ति	ऽ
नि	रें	–	गं	–	रें	सां	नि	नि	ध	प	प
ब्र	ज	ऽ	प	ऽ	ति	त्रि	भु	व	न	प	ति
रे	ग	रे	सा	नि़	रे	ग	म'	ध	नि	ध	प
दे	ऽ	व	न	प	ति	रा	ऽ	स	र	सि	क
म'	ध	नि	सां	नि	ध	प	–	रे	ग	रे	सा
मु	र	ली	ऽ	क	र	धा	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	री
X		0		2		0		3		4	

राग – यमन (ध्रुपद की दुगुन)

स्थाई

प म'	ग म'	ध नि	सांनि	ध प	म' प	प नि	ध प	ध प	म' रे	– ग	– ग
ज य	मु कु	ऽ न्द	म धु	ऽ सू	द न	रा ऽ	ऽ धा	ऽ र	म न	ऽ ह	ऽ रि
ग रे	सा नि़	– ध़	नि़ रे	ग ग	– ग	म' ध	निसां	नि ध	प –	रे ग	रे सा
आ ऽ	ऽ न	ऽ न्द	क ऽ	ऽ न्द	ऽ गो	वि ऽ	न्दगि	ऽ रि	धा ऽ	ऽ ऽ	ऽ री
X		0		2		0		3		4	

अन्तरा

म' –	ग म'	– ध	सां –	सां रें	सा –	नि रें	– गं	– रें	सांनि	नि ध	प प
गो ऽ	ऽ पी	ऽ ऽ	गो ऽ	प प	ति ऽ	ब्र ज	ऽ प	ऽ ति	त्रि भु	व न	प ति
रे ग	रे सा	नि़ रे	ग म'	ध नि	ध प	म' ध	निसां	नि ध	प –	रे ग	रे सा
दे ऽ	व न	प ति	रा ऽ	स र	सिक	मु र	ली ऽ	क र	धा ऽ	ऽ ऽ	ऽ री
X		0		2		0		3		4	

1.6.3 राग भैरव में ध्रुवपद एवं उसकी दुगुन :

राग भैरव – चौताल

स्थाई – शीश जटा गंग सोहे बाल चन्द्र सोहे भाल।
गले सोहे ब्याल माल कर त्रिशुल धारी।।

अन्तरा – भष्म अंग संग सोहे गौरी गणपति गणेश।
कटि लपेटे ब्याघ्र छाल डमरू कर धारी।।

स्थाई

ध	–	नि	सां	सां	–	रें	–	सां	ध	–	प
सी	ऽ	स	ज	टा	ऽ	गं	ऽ	ग	सो	ऽ	हे
प	ग	म	ध	–	प	प	ग	म	रे	–	सा
बा	ऽ	ल	चं	ऽ	द्र	सो	ऽ	हे	भा	ऽ	ल
ध	ध	सा	रे	ग	म	प	ग	म	ध	–	प
ग	ले	ऽ	सो	ऽ	हे	ब्या	ऽ	ल	मा	ऽ	ल
ध	नि	सां	ध	–	प	म	ग	म	रे	–	सा
क	र	त्रि	सू	ऽ	ल	धा	ऽ	ऽ	री	ऽ	ऽ
X		0		2		0		3		4	

अन्तरा

म	–	प	ध	–	नि	सां	–	सां	रें	–	सां
भ	ऽ	स्म	अं	ऽ	ग	सं	ऽ	ग	सो	ऽ	हे
ध	–	नि	सां	सां	सां	रें	गं	मं	रें	–	सां
गौ	ऽ	री	ऽ	ग	ण	प	ति	ग	णे	ऽ	श
प	ग	म	ध	–	प	सां	–	सां	रें	–	सां
क	टि	ल	पे	ऽ	टे	ब्या	ऽ	घ्र	छा	ऽ	ल
ग	म	ध	ध	–	प	म	ग	म	रे	–	सा
ड	म	रू	क	ऽ	र	धा	ऽ	ऽ	री	ऽ	ऽ
X		0		2		0		3		4	

राग भैरव (ध्रुवपद की दुगुन)

स्थाई

ध –	नि सां	सां –	रें –	सां ध	– प	प ग	म ध	– प	प ग	म रे	– सा
सी ऽ	स ज	टा ऽ	गं ऽ	ग सो	ऽ हे	बा ऽ	ल चं	ऽ द्र	सो ऽ	हे भा	ऽ ल
ध ध	सा रे	ग म	प ग	म ध	– प	ध नि	सां ध	– प	म ग	म रे	– सा
ग ले	ऽ सो	ऽ हे	ब्या ऽ	ल मा	ऽ ल	क र	त्रि सू	ऽ ल	धा ऽ	धा री	ऽ ऽ
X		0		2		0		3		4	

अन्तरा

म –	प ध	– नि	सां –	सां रें	– सां	ध –	निसां	सांसां	रें गं	मं रें	– सां
भ ऽ	स्म अं	ऽ ग	सं ऽ	ग सो	ऽ हे	गौ ऽ	री ऽ	ग ण	प ति	ग णे	ऽ श
प् ग	म ध	– प	सां –	सां रें	– सां	ग म	ध ध	– प	म ग	म रे	– सा
क टि	ल पे	ऽ टे	ब्या ऽ	घ्र छा	ऽ ल	ड म	रू क	ऽ र	धा ऽ	ऽ री	ऽ ऽ
X		0		2		0		3		4	

अभ्यास प्रश्न

1) लघु उत्तरीय प्रश्न :

(i) ध्रुवपद गायन शैली के विषय में संक्षेप में बताइए।

(ii) ध्रुवपद गायन शैली में लयकारी का क्या महत्व है?

(iii) राग यमन में एक ध्रुवपद लिखिए।

2) सत्य/असत्य बताइए :

(i) तानसेन प्रसिद्ध ध्रुवपद गायक थे।

(ii) ध्रुवपद गायन में सूलताल का प्रयोग होता है।

(iii) ध्रुवपद चंचल प्रकृति की गायकी है।

1.7 सारांश

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप यह जान चुके हैं कि स्वरलिपि पद्धति के आने के बाद से संगीत सीखना, सुनना एवं सीखाना नितान्त सरल हो गया है। विशेष रूप से विद्यार्थियों को इससे बहुत सहायता प्राप्त हुई है। भातखण्डे जी ने बड़े–बड़े संगीतज्ञों द्वारा जो संगीत सीखा एवं सुना उसे स्वरलिपि पद्धति द्वारा आज लगभग 150 वर्षों से भी अधिक समय तक सुरक्षित रखा है तथा उसका गायन आज सभी संगीत विद्यार्थी कर रहे हैं। स्वरलिपि पद्धति के माध्यम से गायक–वादक तथा संगीत शिक्षक एवं छात्र–छात्राएँ उन रागों एवं गीतों को कंठस्थ करने में सक्षम हैं जिनका अध्ययन वे पहले नहीं कर पाते थे। रागों के अन्तर्गत अनेक गीत रचनाओं को गायन के साथ–साथ स्वरलिपि बद्ध करके हमेशा के लिए आप सुरक्षित रख सकेंगे। साथ ही इस इकाई में आप राग परिचय एवं उनमें लगने वाले विशिष्ट स्वर समुदायों को भी जान चुके हैं।

1.8 शब्दावली

- **सप्तक** : भारतीय संगीत में सप्तक से अर्थ सात स्वरों के क्रमिक समूह से है। सप्तक तीन प्रकार के होते हैं – मन्द्र, मध्य एवं तार सप्तक। मन्द्र सप्तक में आवाज भारी होती है तथा यह मध्य सप्तक के स्वरों से दुगुने नीचे होता हैं। मध्य सप्तक में स्वरों की आवाज न बहुत ऊँची न बहुत नीची होती है। तार सप्तक के स्वरों की आवाज मन्द्र सप्तक से चौगुनी तथा मध्य सप्तक से दुगुनी ऊँची होती है।
- **नाद का छोटा–बड़ा पन** : नाद के छोटे–बड़े पन का अर्थ है आवाज जो पैदा हो रही है वह धीरे है या जोर से उत्पन्न हो रही है। धीरे से उत्पन्न आवाज को नाद का छोटापन तथा जोर से उत्पन्न आवाज को नाद का बड़ापन कहते हैं।

- **थाट** : सात स्वरों का वह समूह जो राग उत्पन्न करने में सक्षम हो थाट या मेल कहलाता है। भातखण्डे जी ने दस थाट बताए हैं जिनका प्रचलन वर्तमान में है। जैसे–भैरव, कल्याण, बिलावल, खमाज़ आदि।
- **जाति** : राग में लगने वाले स्वरों की संख्या के आधार पर राग की जाति निर्भर रहती है। राग में कम से कम पाँच स्वरों तथा अधिकतम सात स्वरों का प्रयोग होता है। सात स्वरों का प्रयोग होने से राग की जाति सम्पूर्ण होती है तथा छः स्वरों के प्रयोग से षाडव एवं पाँच स्वरों के प्रयोग से राग की जाति औडव हो जाती है।
- **पकड़** : राग विशेष में लगने वाला वह छोटा सा स्वर समूह जिससे राग की पहचान तुरन्त हो जाए, पकड़ कहलाता है।
- **वादी–संवादी** : वादी स्वर राग का सबसे प्रमुख स्वर होता है। इसे जीव या अंश स्वर भी कहा जाता है। वादी के अतिरिक्त संवादी स्वर का स्थान दूसरा होता है। उदाहरण के लिए राग रूपी राज्य में 'वादी' स्वर राजा के समान है तो 'संवादी' महामंत्री के समान होता है।
- **उत्तरांग प्रधान** : राग के चलन पर आधारित इस संज्ञा के अनुसार जब राग में मध्य सप्तक एवं तार सप्तक के स्वरों का प्रयोग अधिक होता है तब राग उत्तरांग प्रधान कहलाता है तथा साथ ही मध्य एवं मन्द्र सप्तक में स्वरों के अधिक प्रयोग से राग पूर्वांग प्रधान कहलाता है।

1.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1.4 की उत्तरमाला :

2) एक शब्द में उत्तर दीजिए :

(i) उत्तर : स्वर के नीचे –

(ii) उत्तर : बिन्दु (स्वर के ऊपर)

(iii) उत्तर : चिन्ह ⌒

3) सत्य/असत्य बताइए :

(क) असत्य **(ख)** सत्य **(ग)** असत्य **(घ)** सत्य

1.5 की उत्तरमाला :

2) एक शब्द में उत्तर दीजिए :

(i) उत्तर : निषाद

(ii) उत्तर : रात्रि का प्रथम पहर

3) सत्य/असत्य बताइए :

(क) सत्य **(ख)** असत्य **(ग)** सत्य

4) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :

(i) कोमल

(ii) प्रातःकाल

(iii) सम्पूर्ण

1.6 की उत्तरमाला :

2) सत्य/असत्य बताइए :

(i) सत्य

(ii) सत्य

(iii) असत्य

1.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. भातखण्डे, पंडित विष्णु नारायण, (1970), *हिन्दुस्तानी संगीत पद्धति, क्रमिक पुस्तक मालिका भाग 1 एवं भाग 2,* संगीत कार्यालय, हाथरस।
2. पाठक, पंडित जगदीश नारायण,(1996), *संगीत निबन्ध माला,* पाठक पब्लिकेशन, इलाहाबाद।
3. गोवर्धन, श्रीमती शान्ति, (1995), *संगीत शास्त्र दर्पण भाग–2,* पाठक पब्लिकेशन, इलाहाबाद।
4. झा, पंडित रामाश्रय, (2001), *अभिनव गीतांजली भाग–IV*, संगीत सदन प्रकाशन, इलाहाबाद।

1.11 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. श्रीवास्तव, प्रो0 हरीश चन्द्र, *राग परिचय भाग 1 तथा 2,* संगीत सदन प्रकाशन, इलाहाबाद।
2. श्रीवास्तव, प्रो0 हरीश चन्द्र (1993), *मधुर स्वर लिपि संग्रह भाग 1 एवं 2,* संगीत सदन प्रकाशन, इलाहाबाद।

1.12 निबन्धात्मक प्रश्न

1. स्वरलिपि पद्धति को समझाते हुए किसी एक वर्णित राग में एक ख्याल एवं एक ध्रुवपद की बंदिश को स्वरलिपि बद्ध कीजिए।

इकाई 2 – भातखण्डे तालिपि पद्धति का परिचय तथा पाठ्यक्रम की तालों को लयकारी(दुगुन व चौगुन)सहित लिपिबद्ध करना

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 तालिपि पद्धति
2.3.1 भातखण्डे तालिपि पद्धति
2.3.2 ताल से सम्बन्धित मुख्य पारिभाषिक शब्द
2.4 तालों का परिचय एवं स्वरूप
2.4.1 तीनताल का सम्पूर्ण परिचय
2.4.2 एकताल का सम्पूर्ण परिचय
2.4.3 चारताल का सम्पूर्ण परिचय
2.4.4 कहरवा ताल का सम्पूर्ण परिचय
2.4.5 दादरा ताल का सम्पूर्ण परिचय
2.5 तालों की लयकारियाँ
2.5.1 तीनताल की लयकारियाँ
2.5.2 एकताल की लयकारियाँ
2.5.3 चारताल की लयकारियाँ
2.5.4 कहरवा ताल की लयकारियाँ
2.5.5 दादरा ताल की लयकारियाँ
2.6 सारांश
2.7 शब्दावली
2.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
2.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची
2.10 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
2.11 निबन्धात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0 संगीत के पाठ्यक्रम (बी0ए0एम0वी0–101) के तृतीय खण्ड की दूसरी इकाई है। इससे पहले की इकाईयों के अध्ययन के पश्चात आप बता सकते हैं कि स्वरलिपि पद्धति द्वारा संगीत जैसे प्रायोगिक विषय को भी लिखित रूप में किस तरह सर्वसुलभ बना दिया गया है।

प्रस्तुत इकाई में भातखण्डे जी द्वारा निर्मित तालिपि पद्धति का पूर्ण परिचय देते हुए पाठ्यक्रम की तालों को उदाहरण स्वरूप लिपिबद्ध भी किया गया है। साथ ही तालों की लयकारियाँ भी प्रस्तुत की गई हैं।

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप तालिपि पद्धति के महत्व को समझ सकेंगे। हिन्दुस्तानी संगीत से सम्बन्धित तालों के विभिन्न तत्वों को भी जान सकेंगे। गीत रचनाओं में तालों के प्रयोग एवं उन्हें लिपिबद्ध करने की पद्धति को भी आप समझ सकेंगे।

2.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप :–

- बता सकेंगे कि तालिपि पद्धति द्वारा किस प्रकार ताल का क्रियात्मक स्वरुप प्रस्तुत किया जा सकता है।
- ताल सम्बन्धी समस्त तत्वों को समझते हुए उनके प्रयोग सम्बन्धी नियमों को भी जान सकेंगे।
- ताल के लयकारी सम्बन्धी पक्ष को समझते हुए संगीत में इनका प्रयोग कर सकेंगे।

2.3 तालिपि पद्धति

विद्वान संगीतज्ञों का कथन है कि स्वर तथा लय संगीत कला के दो पैर हैं तथा एक के न होने से वह लँगड़ी रहती है। सम्पूर्ण जगत का आधार मात्र 'लय' है। यदि लय का क्रम क्षण मात्र भी अपने स्थान से हट जाए तो प्रलय का रूप धारण करने में तनिक भी देर नहीं लगेगी। प्रत्येक गति में एक लय है। प्रत्येक जीव के उत्पन्न होते ही उसमें एक काल का सम्मिश्रण हो जाता है तथा यही काल अथवा समय जब निरन्तर बराबर चलता है तो उसी को लय कह देते हैं। संगीत में स्वर की उत्पत्ति के साथ उसे बाँधने हेतु काल की उत्पत्ति हो जाती है। लय ही स्वर को अपने बन्धन में बांधकर उसे परिमार्जित कर देती है। लय के द्वारा ही स्वर में बल एवं माधुर्य उत्पन्न हो जाता है। विभिन्न लयों में बंधकर स्वर सौन्दर्य अत्यधिक बढ़ जाता है। लय से ही संगीत में रंजकता आती है। गायन, वादन एवं नृत्य तीनों विधाओं में लय का विशेष महत्व है। बिना लय के संगीत की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। गायक या वादक स्वरों के माध्यम से कभी विलम्बित लय में, कभी मध्य लय में तथा कभी द्रुत लय में अपनी कला का प्रस्तुतिकरण करता है या कह सकते है कि अपने मन के भावों को श्रोताओं तक पहुँचाता है।

लय को ही एक निश्चित चक्र में बाँधने से तालों की उत्पत्ति होती है। वास्तव में अगर केवल लय ही चलती रहेगी तो सम्भवतः उसके चलने से श्रोता ऊब जाएँ, अतः लय को संगीतपयोगी एवं रजंक बनाने के लिए एक निश्चित क्रम में बाँध देते हैं। उसी निश्चित क्रम को ताल की संज्ञा दी जाती है। लय का क्रम आलाप गायन में भी रहता है परन्तु उसमें निश्चित मात्रा क्रम नहीं रहता है। जब प्रारम्भिक आलाप के पश्चात बंदिश या गीत गाते हैं वहीं से लय का क्रम प्रारम्भ होता है तथा साथ में तबले में इस निश्चित क्रम से सम्बन्धित ताल बजायी जाती है। जिस प्रकार बंदिशों को स्वरलिपि पद्धति में लिखित रूप में सुरक्षित रखा जाता है उसी प्रकार तालों को लिखने के लिए तालिपि पद्धति का प्रयोग किया जाता है।

भारतीय संगीत में ताल का स्थान महत्वपूर्ण है। जिस गायक या वादक को ताल का ज्ञान न हो वह गायक–वादक कहलाने योग्य नहीं है। संगीत में जो समय का निर्धारण होता है वहीं नापने का साधन ताल है। लय को नींव प्रदान करने का कार्य ताल का ही है। स्वर को उत्पन्न करना, उसे गति देना, इसके पश्चात उचित समय पर उसमें ठहराव एवं विस्तार करने से ही राग में रंजकता उत्पन्न होती है। परन्तु राग जैसी महान रचना को बन्धन में बाधना एक कठिन कार्य है। इसके लिए लय, मात्रा, काल आदि का प्रयोग होता है तथा इसका आधार ताल ही है। ताल हमारे भारतीय संगीत की अपनी विशेषता है। पाश्चात्य संगीत में केवल लय दिखाई देती है उनके यहाँ भारतीय तालों के समान किसी प्रकार की व्यवस्था नहीं है।

2.3.1 भातखण्डे तालिपि पद्धति – शास्त्रीय संगीत में तालों के लिखने हेतु तालिपि पद्धति का प्रयोग किया जाता है। इसके लिए मुख्य रूप से भातखण्डे तालिपि पद्धति का प्रचलन है। पं0 विष्णु दिगम्बर पलुस्कर पद्धति द्वारा भी तालों को लिपिबद्ध करने का प्रचलन है, परन्तु भातखण्डे पद्धति ही मुख्य रूप से प्रयोग में लायी जाती है। भातखण्डे तालिपि पद्धति सरल एवं सुगम हैं इसीलिए विद्यार्थियों को भी सुविधा रहती है। भातखण्डे तालिपि पद्धति में ताल चिन्हों का प्रयोग निम्न रूप में किया जाता है। उदाहरण के लिए तीनताल के स्वरूप का विवरण प्रस्तुत किया गया है :

सम मात्रा का चिन्ह – **X**
ताली के लिए – ताली के लिए संख्या जैसे 2, 3, 4 आदि दी जाती है जो कि सम को पहली मानकर होती है।
खाली के लिए – 0

1 2 3 4	5 6 7 8	9 10 11 12	13 14 15 16	
धा धिं धिं धा	धा धिं धिं धा	धा तिं तिं ता	ता धिं धिं धा	धा
X	2	0	3	X

- <u>सम</u> – भातखण्डेताललिपि पद्धति में सम के लिए 'X' का चिन्ह लगाया जाता है। सम का अर्थ होता है ताल का आरम्भ। गायन, वादन, नृत्य में सम का सबसे महत्वपूर्ण स्थान होता है। प्रत्येक ताल की पहली मात्रा को सम कहा जाता है। जैसे तीनताल का सम पहली मात्रा पर ही होगा। संगीत के अन्तर्गत सभी विधाओं में सम पर जोर देकर विशेष रूप से सिर हिलाकर सम के स्थान को दर्शाया जाता है। गायक–वादक अपनी प्रस्तुति देते हुए विभिन्न स्वर, लय की क्रियाएँ करते हुए संगतकार के साथ सम पर आकर मिल जाते हैं। सम पर विशेष रूप से ताली होती है, यही पहली मात्रा भी है। ताल का एक निश्चित क्रम होता है। प्रत्येक बार क्रम पूरा होते ही सम आ जाता है, जैसे 10 मात्रा की ताल है तो पहली मात्रा पर सम के बाद क्रम लगातार चलता रहता है तथा प्रत्येक बार अंत में 10 मात्रा के बाद पहली मात्रा पर सम निरन्तर आते रहता है। संगीत में सम एक ऐसा स्थान होता है जिसका आनन्द संगीतकार व श्रोता दोनों लेते हैं।

- <u>ताली</u> – भातखण्डे ताललिपि पद्धति में ताली के स्थान पर ताली संख्या द्वारा तालों को लिपिबद्ध किया जाता है। जैसा आप जान चुके हैं कि पहली ताली सम पर होती है। इसके बाद जितनी भी ताली आती हैं उन्हें चिन्हित करने के लिए क्रमशः ताली संख्या 2, 3, 4 का प्रयोग किया जाता है। ताल के निश्चित क्रम में प्रत्येक विभाग में जहाँ पर ताली होती है वहाँ उसकी क्रम संख्या लिख देते हैं। तबले पर भी ताली बजाने के स्थान पर धा, धिं बोल बजाए जाते हैं। उदाहरण के लिए आप पहले तीनताल को जान चुके हैं कि उसमें 1, 5 तथा 13 मात्राओं पर ताली है तथा तालियों की क्रम 2, 3 व 4 द्वारा इन स्थानों को चिन्हित किया गया है। इन स्थानों पर ताली बजाई जाती है तथा तबले पर 'धा' का बोल बजता है। प्रत्येक विभाग के प्रारम्भ में ही ताली का स्थान होता है। इसे 'भरी' नाम से भी उच्चारित किया जाता है।

- <u>खाली</u> – भातखण्डे ताललिपि पद्धति में खाली के लिए '0' चिन्ह लगाया जाता है। किसी भी ताल के उस विभाग की पहली मात्रा जहाँ सम, ताली या भरी न हो उसको खाली कहा जाता है। खाली में ताली न लगाकर विशेष रूप से हाथ को उल्टा करके या हवा में इशारे के साथ दर्शाया जाता है। विभिन्न तालों में खाली का स्थान कई जगह हो सकता है। जैसे कि प्रारम्भ में आप तीनताल को जान चुके हैं। इसमें 9वीं मात्रा पर खाली है, वहाँ पर '0' का चिन्ह भी इसीलिए लगाया गया है। अधिकतर यह देखा गया है कि जिन तालों में एक ही खाली स्थान होता है उनमें यह स्थान ज्ञात करने के लिए ताल की कुल मात्राओं का आधा कर उसमें एक जोड़कर जाना जा सकता है, जैसे तीनताल में खाली का स्थान पता लगाना है तो कुल मात्रा 16 की आधा 8 में 1 जोड़कर 8+1=9 खाली का स्थान 9 पर ज्ञात हो जाएगा। खाली का स्थान तालों में विशेष रूप से महत्वपूर्ण है क्योंकि सम जो सबसे सौन्दर्यपूर्ण स्थान है उसका पता हमें खाली के द्वारा ही पता चलता है। सम आने से पहले खाली के द्वारा हमें मात्राओं का पता चलता है, जैसे गायक कौन सी मात्रा पर है तथा सम कितनी मात्रा बाद आ जाएगा इत्यादि। खाली का स्थान, साधारणतः सम अर्थात ताल की पहली मात्रा को छोड़कर अन्य विभागों के प्रारम्भ में होता है। विभिन्न तालों में खाली के स्थान कई हो सकते हैं।

• **विभाग** – भातखण्डे तालिपि पद्धति में विभाग को एक सीधी रेखा 'I' से चिन्हित किया जाता है। सभी तालें विभिन्न विभागों में बँटी रहती हैं। जिस प्रकार सभी तालों की निश्चित मात्राएँ होती हैं उसी प्रकार तालों के निश्चित विभाग भी होते हैं। अधिकतर विभागों की संख्या 2 से लेकर 5 या 6 तक हो सकती है। जितनी बार ताली एवं खाली का स्थान ताल में होगा उतनी बार विभाग को भी स्थान मिलेगा अर्थात ताली–खाली पर विभागों की संख्या निर्भर है। जैसे तीनताल में 1, 5, 13 पर ताली तथा 9 पर खाली है तो इस प्रकार 4 विभाग होंगे। हमारे संगीत में कुछ ऐसी भी तालें हैं जिनमें विभागों की संख्या बहुत अधिक है तथा प्रत्येक मात्रा में एक विभाग होता है। जैसे कुंभ और रूद्र तालें, इन तालों में प्रत्येक मात्रा एक विभाग का स्थान लिए है। विभागों से ताल में एक खाँचा बना रहता है तथा गायक–वादक को ताल का ज्ञान स्पष्ट रूप से हो जाता है।

2.3.2 ताल से सम्बन्धित मुख्य पारिभाषिक शब्दः

• **आवर्तन** – किसी भी ताल का अपना एक निश्चित क्रम होता है। ताल जितनी मात्रा की होती है उतनी मात्रा पूर्ण होने के बाद पुनः उसी क्रम में चलती रहती है। इसे ताल का एक चक्र कहा जाता है तथा इसी चक्र का नाम आवर्तन है। इसी प्रकार गीत रचना के एक पूरे चक्र को आवर्तन कहते हैं। अर्थात पहली मात्रा से वापस पूरे चक्र के पश्चात जब पुनः पहली मात्रा पर जाते हैं तब उसे एक आवर्तन कहते हैं। आवर्तन एवं सम में यह अन्तर है कि सम पहली मात्रा में होता है तथा सम से पुनः सम तक आने को आवर्तन कहा जाता है।

• **मात्रा** – संगीत में समय नापने के लिए जिस इकाई का प्रयोग किया जाता है उसे मात्रा कहते हैं। मात्राओं के आधार पर तालों की रचना होती है। प्रत्येक ताल अपनी निश्चित मात्रा एवं बोलों के आधार पर पहचानी जाती है। जैसे– तीनताल में 16 मात्राएँ व एकताल में 12 मात्राएँ होती हैं। मात्राओं के आधार पर विभिन्न लयकारियाँ की जाती हैं। गीत रचनाओं में विशेष रूप से मात्राओं के आधार पर पता चलता है कि कौन सी रचना किस मात्रा से प्रारम्भ है तथा किस मात्रा में सम तथा खाली है। बंदिशों का आरम्भ भी अलग–अलग मात्राओं से होता है।

गीत रचनाओं एवं बंदिश के विषय में आप जान चुके हैं कि राग की वह शब्द रचना जो विभिन्न तालों में निबद्ध होती है, बंदिश कहलाती है। ताल पक्ष से सम्बन्धित वाद्यों पर बजने वाली बदिंशों के विषय में भी यहाँ बताना आवश्यक है। वाद्यों पर बजने वाली स्वर एवं तालबद्ध रचनाओं को 'गत' कहा जाता है। गत कई प्रकार की होती हैं। गतें विलम्बित एवं मध्य लय में बजायी जाती हैं। इनमें लयकारियाँ भी की जाती है। एक गत में पाँच मात्रा के मुखड़े लेने का भी चलन है। यह गतों की ताल पक्ष सम्बन्धी कुछ जानकारी थी।

• **ठेका** – यह शब्द ताल वाद्यों का सबसे मौलिक तथा महत्वपूर्ण शब्द है। ठेका, वर्णों या बोलों की वह बंदिश है जो विशिष्ट संख्या, बोल तथा विभाग वाली मात्राओं में निबद्ध होती है। मात्राओं की संख्या, बोलों एवं विभागों के अनुसार प्रत्येक ताल का स्वरूप भिन्न होता है। उदाहरण के लिए चारताल एवं एकताल की मात्राएँ एवं विभाग एक से हैं परन्तु बोलों की दृष्टि से इनमें भिन्नता है। आप पहले जान चुके हैं कि बोलों, मात्राओं, विभागों आदि के आधार पर प्रत्येक ताल भिन्न–भिन्न होती है। साथ ही एक भिन्नता और भी है जो जानना आवश्यक है। कुछ तालों के बोलों में खुलापन होता है जिन्हें खुले एवं दमदार बोलों की तालों के अन्तर्गत रखा जाता है। इस प्रकार की तालों को पखावज पर बजाया जाता है, जैसे – चारताल, सूलताल आदि। अन्य तालें तबले पर बजाई जाती है। पखावज एवं मृदंग पर बजने वाली तालें *'थपिया बाज'* के नाम से जानी जाती है। 'थपिया बाज' का अर्थ ही खुले बोल का बाज है। ठेका चक्राकार घूमता रहता है। ठेके सम्बन्धी अन्य तत्व जैसे सम, ताली खाली आदि के विषय में आप पहले ही जान चुके है। ठेका 'सम' की धुरी पर घूमता रहता है। इस प्रकार सम्पूर्ण ताल के स्वरूप को सांगीतिक भाषा में ठेका कहा जाता है।

• **बोल** – तबले, पखावज एवं ताल वाद्यों में जो वर्ण या अक्षर बजाए जाते हैं उन्हें ही बोल कहा जाता है। बोलों से तालों का स्वरूप स्पष्ट रूप से पता चलता है। हमारे पुराने विद्वान तबला वादकों द्वारा ही प्रत्येक ताल के बोलों का निर्माण किया गया है। अनेक तालों के बोलों में कुछ विभिन्नताएँ भी नजर आती हैं परन्तु प्रचलित सभी तालों का स्वरूप लगभग सभी जगह एक सा है। बोलों में थोड़ा बहुत अन्तर होने के बाद भी सभी तालों का स्वरूप एक जैसा है। तीनताल के बोल उदाहरण के लिए आप जान चुके हैं। तीनताल में जो धा धिं धि धा ..... आदि वर्ण या शब्द हैं, इन्हीं को बोल कहा जाता है।

अभ्यास प्रश्न

1) लघु उत्तरीय प्रश्न :

(i) तालिपि पद्धति में सम का महत्व बताइए।

(ii) खाली के विषय में आप क्या जानते हैं? बताइए।

2) एक शब्द में उत्तर दीजिए :

(i) खाली के लिए कौन सा चिन्ह प्रयोग होता है?

(ii) ताल की पहली मात्रा पर क्या होता है?

(iii)धमार गायन में किस ताल का प्रयोग होता है?

3) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :

(क) लय को निश्चित मात्राओं में बाँधने पर .....की उत्पत्ति होती है।

(ख) ध्रुपद गायन में ..... ताल का प्रयोग होता है।

(ग) पखावज में बजने वाली तालें ..... नाम से जानी जाती हैं।

2.4 तालों का परिचय एवं स्वरूप

भारतीय शास्त्रीय संगीत में प्रमुख रुप से तालों में तीनताल, एकताल, चारताल, झपताल, धमारताल, तिलवाड़ा ताल एवं रूपक ताल का प्रयोग होता है। तीनताल एवं एकताल ख्याल गायन में सबसे प्रमुख तथा चारताल ध्रुपद गायन की सबसे प्रमुख ताल है। आप ताल सम्बन्धी सम्पूर्ण तत्वों का अध्ययन कर चुके हैं। अब आप पाठ्यक्रम से सम्बन्धित कुछ तालों की विस्तृत जानकारी प्राप्त करेंगे।

2.4.1 तीनताल का सम्पूर्ण परिचय :

मात्रा – *16*, **विभाग** – *4*, **ताली** – *1, 5 व 13* पर तथा **खाली** – *9* पर

ठेका

धा धिं धिं धा	धा धिं धिं धा	धा तिं तिं ता	ता धिं धिं धा	धा
X	2	0	3	X

परिचय – तीनताल में 16 मात्राएँ होती हैं। यह 16 मात्राएँ 4 विभागों में बटी रहती हैं। चारों विभाग 4–4 मात्राओं के होते हैं। जैसा कि आप सम की परिभाषा जान चुके हैं कि सम हमेशा प्रथम मात्रा पर होता है। तीनताल में सम 'धा' पर है। खाली का स्थान ताल में बीचों–बीच 9वीं मात्रा पर है।

हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत के अन्तर्गत 'तीनताल' बहुत महत्वपूर्ण ताल है। रागों में द्रुत ख्यालों में अधिकतर इसी ताल का प्रयोग होता है। अनेक विलम्बित ख्याल भी तीनताल में गाए जाते हैं। ताल में सम का स्थान प्रथम मात्रा में होता है परन्तु अधिकतर ख्याल गायन की बंदिशों का प्रारम्भ खाली से होता है इसलिए आवश्यक नहीं है कि बंदिश की पहली मात्रा पर भी सम ही

होगा। कई विद्वान इस ताल के बोलों में 'धा' के स्थान पर 'ना' शब्द का प्रयोग भी करते हैं। जैसे – ना धिं धिं ना, ना धिं धिं ना। तबला वादन में भी यह ताल सबसे प्रमुख रूप से बजायी जाती है। अति द्रुत गति के तराना गायन में भी तीनताल विशेष रूप से प्रचलित है।

2.4.2 एकताल का सम्पूर्ण परिचय :

मात्रा – 12, **विभाग** – 6, **ताली** – 1, 5, 9 व 11 पर तथा **खाली** – 3 व 7 पर

ठेका

धिं	धिं	धागे	तिरकिट	तू	ना	कत्त	ता	धागे	तिरकिट	धी	ना	धिं
X		0		2		0		3		4		X

परिचय – एकताल में 12 मात्राएँ होती हैं। इसकी 12 मात्राएँ 6 विभागों में बटी रहती हैं। प्रत्येक विभाग 2 मात्रा का होता है। सम प्रथम स्थान, 'धिं' पर होता है। खाली के स्थान दो हैं तथा ताली के स्थान 4 हैं।

ख्याल गायन में 'विलम्बित ख्याल' के अन्तर्गत यह सबसे प्रमुख ताल है। प्रत्येक राग में अनेक बड़े ख्याल एकताल में निबद्ध होते हैं। वर्तमान में अनेक द्रुत ख्याल भी एकताल में निबद्ध हैं। कुछ वर्षों पूर्व एकताल अधिकतर 'विलम्बित ख्याल' में ही प्रयुक्त की जाती थी। एकताल का चक्र घूमता हुआ होता है, जिस प्रकार 'दादरा ताल' का ठेका घूमता हुआ होता है, क्योंकि यह 6 मात्रा की होती है। इसी प्रकार एकताल में ठीक उससे दुगुनी 12 मात्राएँ होती हैं और यह भी घूमती लय में बजती है। ख्याल गायन के क्षेत्र में यह ताल विशेष रूप से प्रयोग की जाती है। विलम्बित ख्याल में यह ताल बहुत धीमी लय में बजती है परन्तु **धागे तिरकिट** जैसे बड़े बोलों के कारण इसके भराव में आसानी हो जाती है। धीमी लय में मात्राओं को भरने के लिए यह बोल सहायता प्रदान करते हैं। ग्वालियर, आगरा, रामपुर एवं दिल्ली घराने के गायक अधिकतर इस ताल में बड़ा ख्याल गाते हैं परन्तु किराना घराने के गायक एकताल में बड़ा ख्याल गाते समय इसकी लय अतिविलम्बित कर देते हैं।

2.4.3 चारताल का सम्पूर्ण परिचय :

मात्रा – 12, **विभाग** – 6, **ताली** – 1, 5, 9 व 11 पर तथा **खाली** – 3 व 7 पर

ठेका

धा	धा	दिं	ता	किट	धा	दिं	ता	तिट	कत	गदि	गन	धा
X		0		2		0		3		4		X

परिचय – चारताल में 12 मात्राएँ होती हैं। मात्राएँ 6 विभागों में बटी रहती हैं। प्रत्येक विभाग 2–2 मात्राओं का होता है। सम प्रथम मात्रा में 'धा' पर है। इस ताल में खाली के स्थान 2 हैं तथा ताली के स्थान 4 हैं। चारताल में विभाग एवं मात्राओं की संख्या एकताल के जैसी है परन्तु बोल अथवा वर्ण असमान हैं।

हिन्दुस्तानी संगीत के अन्तर्गत गायन में जिस प्रकार तीनताल एवं एकताल का बहुत प्रयोग होता है उसी प्रकार ध्रुपद गायन में चारताल का प्रयोग सबसे अधिक होता है। वास्तव में चारताल 'ध्रुपद' गायन में बजने वाली सबसे प्रमुख ताल है। पहले भी आप जान चुके हैं कि चारताल 'खुले बोल' की ताल है। इसे 'थपिया बाज' की ताल भी कहते हैं क्योंकि इस ताल में थाप का प्रयोग विशेष रूप से होता है। यह पखावज पर बजने वाली ताल है। कुछ तबला वादक तबले पर भी इस ताल को बजा लेते हैं परन्तु ध्रुपद गायन में यह ताल 'पखावज' पर ही बजायी जाती है। यह ताल गम्भीर प्रकृति की है अतः यह ध्रुपद गायन के लिए उपयुक्त मानी जाती है।

चारताल के अतिरिक्त सूलताल एवं तीव्राताल भी ध्रुपद गायन के प्रयोग में आती है। ध्रुपद गायन में विषेष रूप से इस ताल को मध्यलय से लेकर द्रुत गति में विभिन्न लयकारियाँ दिखाने के लिए प्रयोग किया जाता है।

2.4.4 कहरवा ताल का सम्पूर्ण परिचय :

मात्रा – 8, **विभाग** – 2, **ताली** – 1 पर तथा **खाली** – 5 पर

ठेका

धा	गे	ना	ती	ना	क	धी	ना	धा
X				0				X

परिचय – कहरवा ताल में 8 मात्राएँ होती हैं। मात्राएँ 2 विभागों में बटी रहती हैं। प्रत्येक विभाग 4–4 मात्राओं का होता है। सम प्रथम मात्रा में 'धा' पर है। इस ताल में खाली का स्थान 1 हैं तथा ताली का स्थान भी 1 हैं।

कहरवा ताल चंचल प्रकृति का ताल है। इसका प्रयोग तबले, ढ़ोलक, नाल तथा खोल आदि वाद्यों पर किया जाता है। भाव संगीत, लोक संगीत तथा फिल्मी संगीत के साथ संगति के लिए इसका प्रयोग किया जाता है। इसमें लग्गी, लड़ी तथा ठेके की किस्मों का प्रयोग होता है। कहरवा ताल सोलो वादन के उपयुक्त नहीं है।

2.4.5 दादरा ताल का सम्पूर्ण परिचय :

मात्रा – 6, **विभाग** – 2, **ताली** – 1 पर तथा **खाली** – 4 पर

ठेका

धा	धी	ना	धा	ती	ना	धा
X			0			X

परिचय – दादरा ताल में 6 मात्राएँ होती हैं। मात्राएँ 2 विभागों में बटी रहती हैं। प्रत्येक विभाग 3–3 मात्राओं का होता है। सम प्रथम मात्रा में 'धा' पर है। इस ताल में खाली का स्थान 1 है तथा ताली का स्थान भी 1 है।

दादरा ताल चंचल प्रकृति का ताल है। दादरा एक विशेष गायन शैली का नाम भी है। इसका प्रयोग तबले, ढ़ोलक, नाल तथा खोल आदि वाद्यों पर किया जाता है। भाव संगीत, लोक संगीत, भजनों तथा फिल्मी संगीत के साथ संगति के लिए इसका प्रयोग किया जाता है। इसमें लग्गी, लड़ी तथा ठेके की किस्मों का प्रयोग होता है। दादरा ताल सोलो वादन के उपयुक्त नहीं है।

अभ्यास प्रश्न

1) लघु उत्तरीय प्रश्न :

(i) तीनताल का परिचय दीजिए।

(ii) चारताल का स्वरूप बताइए।

(iii) कहरवा का स्वरुप बताइए।

2) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :

(क) तीनताल में ..... मात्रा होती हैं।

(ख) एकताल में तीसरी मात्रा पर ..... होती है।

(ग) चारताल में ..... ताली होती हैं।

(घ) कहरवा व दादरा ताल में ..... नहीं होता है।

3) एक शब्द में उत्तर दीजिए :

(i) तीनताल में कितने विभाग होते हैं?

(ii) चारताल में कितनी खाली होती हैं?

(iii) एकताल किस गायन शैली में प्रयुक्त होती है?

2.5 तालों की लयकारियाँ

यदि कहा जाए कि लय के बिना संगीत संभव नहीं है तो यह कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी। समय की समान गति ही लय कहलाती है। लय एवं लयकारी में अन्तर होता है। लय यदि संज्ञा है तो लयकारी क्रिया है। लय और लयकारी दोनों एक–दूसरे पर आश्रित हैं। बिना लय के लयकारी भी सम्भव नहीं है। लय ही लयकारी का आधार है। लय अनेक प्रकार की हो सकती हैं परन्तु बहुत समय पहले से ही संगीत विद्वानों ने मुख्य रूप से इसके तीन प्रकार माने हैं।

1. विलम्बित लय **2.** मध्य लय **3.** द्रुत लय

इसके अतिरिक्त देखा जाए तो अतिविलम्बित या अति द्रुत लय भी होती है परन्तु मुख्य रूप से क्रमशः यह दोनों भी विलम्बित एवं द्रुत के अन्तर्गत आ जाती हैं, इसीलिए इन तीन मुख्य लय प्रकारों को ही सर्वसम्मति से मान्यता प्राप्त है।

अब आप लयकारी को जानेंगे। लयकारी की परिभाषा हम यह दे सकते हैं कि "संगीत में लय के विभिन्न दर्जे करने की क्रिया को लयकारी कहते हैं।" लय के दर्जे करने से तात्पर्य यह है कि कलाकार जब कलात्मक दृष्टि से कभी एक मात्रा में दो, तीन या चार मात्रा तथा कभी दो में तीन, चार में पाँच मात्रा पढ़कर/दिखाकर लय के चमत्कार का प्रदर्शन करता है तो इसी को लयकारी कहते हैं।

लय के समान ही लयकारी के भी विभिन्न प्रकार माने गए हैं परन्तु इसके भी दो मुख्य प्रकार हैं।

एक सीधी लयकारी होती है जिसके अन्तर्गत दुगुन, चौगुन अठगुन आदि आते हैं। दूसरी आड़ की लयकारी होती है जिसके अन्तर्गत तिगुन, आड़, कुआड़ तथा बिआड़ आदि लयकारियाँ आती हैं।

लयकारियों के अन्तर्गत बहुत प्रकार की लयकारियाँ हो सकती हैं परन्तु पाठ्यक्रम के अनुसार आप सीधी लयकारियों को ही जान सकेंगे। विभिन्न तालों में सीधी लयकारी से सम्बन्धित दुगुन, चौगुन को आप जानेंगे। तालों में लयकारी करने से पूर्व आड़ लयकारियों के सम्बन्ध में मात्र एक परिचय जानना आवश्यक सा प्रतीत होता है। सीधी लयकारी के अतिरिक्त अन्य प्रकार की लयकारी को जिसके अन्तर्गत एक मात्रा में डेढ़ मात्रा, तीन मात्रा या सवा मात्रा आदि आते हैं, आड़ की लयकारी कहते हैं। परन्तु व्यापक दृष्टि से वर्तमान में आड़ का व्यापक अर्थ हो चुका है। आड़ का विशेष रूप से यह अर्थ है कि वह लयकारी जिसमें एक मात्रा में डेढ़ या दो मात्रा में तीन मात्रा की लयकारी हो। एक मात्रा में डेढ़ हो या 2 मात्रा में 3 बात एक ही है। इसी प्रकार कुआड़ लयकारी के अन्तर्गत एक मात्रा में सवा मात्रा या 4 मात्रा में 5 मात्रा आती हैं। यह लयकारियाँ कठिन मानी जाती हैं। आप यहाँ तालों में सीधी लयकारी करना जान सकेंगे। तालों के विषय में आप सम्पूर्ण परिचय जान चुके है अब तालों की दुगुन, चौगुन लयकारियाँ जानेंगे।

2.5.1 तीनताल की लयकारियाँ :

ठेका

धा धिं धिं धा	धा धिं धिं धा	धा तिं तिं ता	ता धिं धिं धा	धा
X	2	0	3	X

तीनताल की दुगुनः

धा धिं धिं धा धा धिं धिं धा | धा तिं तिं ता ता धिं धिं धा |

X 2

धा धिं धिं धा धा धिं धिं धा | धा तिं तिं ता ता धिं धिं धा | धा

0 3 X

दुगुन लयकारी में प्रत्येक दो मात्राओं को एक बना दिया जाता है। जैसा आप पहले जान चुके हैं कि दुगुन लयकारी में एक मात्रा में दो मात्रा बोली जाती हैं। देखा जाए तो दुगुन में ताल दो बार पूरे चक्र के साथ बोली जाती है। दुगुन करते समय मात्राएँ एवं विभागों में कोई परिवर्तन नहीं होता है। मात्र दो बोलों को एक मात्रा मान लिया जाता है जैसा कि आपने तीनताल की दुगुन में देखा। दो मात्रा को एक करने के लिए इसके नीचे अर्द्धचन्द्राकार चिन्ह लगा देते हैं।

दुगुन करने की एक और पद्धति भी होती है जिसे 'एक आवर्तन में दुगुन करना' के नाम से सम्बोधित किया जाता है। आप जान चुके हैं कि पहले जो दुगुन की उसमें ताल का चक्र दो बार अर्थात दो आवर्तन में ताल का प्रयोग किया परन्तु एक आवर्तन में दुगुन करने के लिए मात्रा एवं विभाग तो वैसे ही रहेंगे परन्तु एक विशेष जगह से ताल की दुगुन शुरू की जाएगी तथा ताल की दो बार पुनरावृत्ति नहीं होगी। उदाहरण के लिए आप एक आवर्तन में तीनताल की दुगुन को जानेंगे।

एक आवर्तन में तीनताल की दुगुनः

धा धिं धिं धा	धा धिं धिं धा	धा धिं धिं धा धा धिं धिं धा	धा तिं तिं ता ता धिं धिं धा	धा
X	2	0	3	X

तीनताल की चौगुन लयकारीः

धाधिंधिंधा धाधिंधिंधा धातिंतिंता ताधिधिंधा | धाधिंधिंधा धाधिंधिंधा धातिंतिंता ताधिधिंधा |

X 2

धाधिंधिंधा धाधिंधिंधा धातिंतिंता ताधिधिंधा | धाधिंधिंधा धाधिंधिंधा धातिंतिंता ताधिधिंधा | धा

0 3 X

एक आवर्तन में तीनताल की चौगुनः

धा	धिं	धिं	धा	धा	धिं	धिं	धा	
X				2				
धा	तिं	तिं	ता	धाधिंधिंधा	धाधिंधिंधा	धातिंतिंता	ताधिधिंधा	धा
0				3				X

तीनताल की चौगुन 13वीं मात्रा से प्रारम्भ होगी तथा 4 मात्राओं में पूरी चौगुन आ जाएगी। चौथे विभाग की चार मात्राओं में चौगुन पूर्ण रूप में आ जाएगी।

2.5.2 एकताल में लयकारियाँ :

ठेका

धिं	धिं	धागे	तिरकिट	तू	ना	कत	ता	धागे	तिरकिट	धी	ना	धिं
X		0		2		0		3		4		X

एकताल की दुगुनः

धिंधिं	धागेतिरकिट	तूना	कतता	धागेतिरकिट	धीना	
X		0		2		
धिंधिं	धागेतिरकिट	तूना	कतता	धागेतिरकिट	धीना	धिं
0		3		4		X

तीनताल के समान एकताल की दुगुन लयकारी में भी प्रत्येक दो मात्राओं को एक कर दिया जाता है तथा विभागों में मात्रा की संख्या तथा विभागों का स्वरूप एक जैसा रहता है। बस ताल का ठेका दो बार प्रयोग में लाया जाता है। एकताल की दुगुन करने के लिए दूसरे प्रकार को भी प्रयोग में लाया जाता है, जिसमें एक आवर्तन में एकताल की दुगुन की जाती है।

एक आवर्तन में एकताल की दुगुन :

धिं	धिं	धागे	तिरकिट	तू	ना	धिंधिं	धागेतिरकिट	तूना	कतता	धागेतिरकिट	धीना	धिं
X		0		2		0		3		4		X

एकताल की दुगुन 7वीं मात्रा से प्रारम्भ होगी तथा 6 मात्राओं में सम्पूर्ण होकर, दुगुन लयकारी आ जाएगी। इसमें एक आवर्तन का ही प्रयोग होगा अर्थात ठेका एक ही बार प्रयोग में आएगा।

एकताल की चौगुन लयकारी – एकताल की चौगुन के लिए चार बार ठेके की पुनरावृत्ति करनी होगी।

धिंधिंधागेतिरकिट	तूनाकतता	धागेतिरकिटधीना	धिंधिंधागेतिरकिट	
X		0		
तूनाकतता	धागेतिरकिटधीना	धिंधिंधागेतिरकिट	तूनाकतता	
2		0		
धागेतिरकिटधीना	धिंधिंधागेतिरकिट	तूनाकतता	धागेतिरकिटधीना	धिं
3		4		X

एक आवर्तन में एकताल की चौगुनः

धिं	धिं	धागे	तिरकिट	तू	ना	
X		0		2		
कत	ता	धागे	धिंधिंधागेतिरकिट	तूनाकतता	धागेतिरकिटधीना	धिं
0		3		4		X

एकताल की चौगुन 10वीं मात्रा से प्रारम्भ होगी तथा 3 मात्राओं में पूरी चौगुन आ जाएगी।

2.5.3 चारताल की लयकारियाँ:

ठेका

धा धा	दिं ता	किट धा	दिं ता	तिट कत	गदि गन	धा
X	0	2	0	3	4	X

चारताल की दुगुन:

धा धा	दिं ता	किट धा	दिं ता	तिट कत	गदिगन	
X		0		2		
धा धा	दिं ता	किट धा	दिं ता	तिट कत	गदिगन	धा
0		3		4		X

चारताल की दुगुन भी एकताल के समान ही होती है। प्रत्येक दो मात्राओं को एक मात्रा बनाकर ठेके की दो बार पुनरावृत्ति की जाती है।

एक आवर्तन में चारताल की दुगुन:

धा धा	दिं ता	किट धा	धा धा दिं ता	किट धा दिं ता	तिट कत गदिगन	धा
X	0	2	0	3	4	X

चारताल की दुगुन 7वीं मात्रा से प्रारम्भ होगी तथा 6 मात्राओं में सम्पूर्ण दुगुन लयकारी आ जाएगी। लयकारी करते समय अधिक मात्राओं को एक मात्रा बनाते समय सावधानीपूर्वक चिन्ह लगाने चाहिए।

चारताल की चौगुन लयकारी:

धाधादिंता	किटधादिंता	तिटकतागदिगन	धाधादिंता	
X		0		
किटधादिंता	तिटकतागदिगन	धाधादिंता	किटधादिंता	
2		0		
तिटकतागदिगन	धाधादिंता	किटधादिंता	तिटकतागदिगन	धा
3		4		X

एक आवर्तन में चारताल की चौगुन:

धा	धा	दिं	ता	किट	धा	
X		0		2		
दिं	ता	तिट	धाधादिंता	किटधादिंता	तिटकतागदिगन	धा
0		3		4		X

चारताल की चौगुन 10वीं मात्रा से प्रारम्भ होगी। 3 मात्राओं में चारताल की पूरी चौगुन आ जाएगी।

2.5.4 कहरवा ताल की लयकारियाँ :

ठेका

धा	गे	ना	ती	ना	क	धी	ना	धा
X				0				X

कहरवा ताल की दुगुन :

धागे	नाती	नाक	धीना	धागे	नाती	नाक	धीना	धा
X				0				X

एक आवर्तन में कहरवा ताल की दुगुन :

धा	गे	ना	ती	धागे	नाती	नाक	धीना	धा
X				0				X

कहरवा ताल की चौगुन :

धागेनाती	नाकधीना	धागेनाती	नाकधीना	धागेनाती	नाकधीना	धागेनाती	नाकधीना	धा
X				0				X

एक आवर्तन में कहरवा ताल की चौगुन :

धा	गे	ना	ती	ना	क	धागेनाती	नाकधीना	धा
X				0				X

2.5.5 दादरा ताल की लयकारियाँ :

ठेका

धा	धी	ना	धा	ती	ना	धा
X			0			X

दादरा ताल की दुगुन :

धाधी	नाधा	तीना	धाधी	नाधा	तीना	धा
X			0			X

एक आवर्तन में दादरा ताल की दुगुन :

धा	धी	ना	धाधी	नाधा	तीना	धा
X			0			X

दादरा ताल की चौगुन :

धाधीनाधा	तीनाधाधी	नाधातीना	धाधीनाधा	तीनाधाधी	नाधातीना	धा
X			0			X

एक आवर्तन में दादरा ताल की चौगुन :

धा	धी	ना	धा	ती	धाधी	नाधातीना	धा
X			0				X

दुगुन व चौगुन लयकारी में आप जान चुके हैं कि जो भी लयकारी करनी हो उतनी मात्राएँ एक मात्रा में समायोजित कर दी जाती है। जैसे दुगुन में दो मात्राओं को एक मात्रा बना देते हैं। इसी प्रकार तिगुन एवं चौगुन में क्रमशः तीन मात्रा एवं चार मात्राओं को एक बनाकर लयकारी की जाती है। लयकारी करते समय अधिक मात्राओं को एक मात्रा बनाते समय चिन्हों पर ध्यान देना आवश्यक होता है।

अभ्यास प्रश्न

1) दीर्घ उत्तरीय प्रश्न :

(i) लयकारी से आप क्या समझते है? किन्ही दो तालों की दुगुन व चौगुन लयकारी लिखिए।

2) लघु उत्तरीय प्रश्न :

(i) तीनताल की चौगुन लयकारी लिखिए।

(ii) चारताल की दुगुन लयकारी लिखिए।

(iii) लयकारी से आप क्या समझते हैं?

3) एक शब्द में उत्तर दीजिए :

(i) तीनताल की चौगुन किस मात्रा से प्रारम्भ होगी?

(ii) चौगुन लयकारी में एक मात्रा में कितनी मात्रा समाहित होती हैं?

(iii) चारताल की दुगुन कितनी मात्राओं में पूर्ण रूप में आती है?

(iv) एकताल की चौगुन कितनी मात्राओं में पूर्ण रूप से आती है?

2.6 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप जान चुके हैं कि संगीत के अभिन्न अंग व तालों की उत्पत्ति रागों की रंजकता को बढ़ाने के लिए हुई है। वर्तमान समय में उत्तरी भारत में अनेकों ताल प्रचलित हैं। जैसे – तीनताल, एकताल, चारताल, झपताल, रूपक, धमार, दीपचन्दी आदि। ताल के योग से संगीत में रसानुभूति क्षणिक न रहकर परमानन्द प्राप्ति के साधन में सहायता करती है। पहले गीत रचनाओं एवं तालों से सम्बन्धित सभी अव्यवों को कंठस्थ करना पड़ता था परन्तु तालिपि पद्धति के आने से इस क्षेत्र में क्रान्ति का सूत्रपात हो गया। संगीत के अन्तर्गत आने वाली समस्त स्वर–ताल बद्ध रचनाओं में लय एवं ताल के समस्त अंगों को समझना बेहद आसान हो गया है। गीत रचनाओं में जिस लय एवं ताल में संगत होती है उसमें समान रूप से कायम रहना परम आवश्यक है। विशेष रूप से ख्याल गायन में ताल पक्ष के लिए 'तबला' वाद्य में संगत की जाती है तथा ध्रुपद गायन में 'पखावज' वाद्य में संगत की जाती है। विभिन्न तालों की लयकारी में विभिन्न लयों के मध्यम से चमत्कार का प्रदर्शन किया जाता है। लयकारी द्वारा गीत रचनाओं एवं तालों में कुछ नवीनता आ जाती है जिससे गायन–वादन में नवीन सौन्दर्य की अभिवृद्धि होती है। इस इकाई के अध्ययन से आप लय–ताल एवं लयकारी के सम्बन्ध में सभी तत्वों के समुचित प्रयोग को समझ सकेंगे।

2.7 शब्दावली

- **थपिया बाज** : पखावज पर बजने वाली ताले खुले बोल की तालें होती हैं, जिन्हें थपिया बाज की ताल भी कहते हैं। पखावज वाद्य में थाप का विशेष महत्व है। गीला आटा लगाकर इसकी थाप में विशेष गूंज उत्पन्न हो जाती है। पूरी हथेली से बजने के कारण ही इसकी थाप का विशेष महत्व है और इसे थपिया बाज कहते हैं।

• **धमार गायन :** ध्रुपद एवं ख्याल गायन के मध्य अपनी स्थिति रखने वाला गायन धमार है। ध्रुपद शैली से गाया जाने वाला गीत का प्रकार धमार कहलाता है। विशेष रूप से राधा एवं कृष्ण इस गीत के गायक होते हैं तथा होली के अवसर पर ब्रज की होरी, राधा–कृष्ण एवं गोपियों की होरी, अबीर गुलाल, फाग, पिचकारियाँ, रंगों एवं भीगी चुनरियों का वर्णन इसमें होता है।

2.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

2.3 की उत्तरमाला :

1) एक शब्द में उत्तर दो :

(i) उत्तर : 0 (शून्य)

(ii) उत्तर : X (सम)

(iii) उत्तर : धमार ताल

2)रिक्त स्थानों की पूर्ति करो :

(क) उत्तर : ताल **(ख)** उत्तर : चारताल **(ग)** उत्तर : थपिया बाज

2.4 की उत्तरमाला :

2)रिक्त स्थानों की पूर्ति करो :

(क) उत्तर : 16 **(ख)** उत्तर : खाली **(ग)** उत्तर : चार**(घ)** उत्तर : स्वतन्त्र वादन

3)एक शब्द में उत्तर दीजिए :

(i) उत्तर : 4

(ii) उत्तर : 2

(iii) उत्तर : ख्याल गायन

2.5 की उत्तरमाला :

3) एक शब्द में उत्तर दीजिए :

(i) उत्तर : 13वीं

(ii) उत्तर : 4

(iii) उत्तर : 6 मात्राओं में

(iv) उत्तर : तीन मात्राओं में

2.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. भातखण्डे, पंडित विष्णु नारायण, (1970), *हिन्दुस्तानी संगीत पद्धति, क्रमिक पुस्तक मालिका भाग 1 एवं भाग 2,* संगीत कार्यालय, हाथरस।
2. श्रीवास्तव, प्रो0 हरीश चन्द्र, (1990), *राग परिचय भाग 2,* संगीत सदन प्रकाशन, इलाहाबाद।
3. गोवर्धन, श्रीमती शान्ति, (1995), *संगीत शास्त्र दर्पण भाग–2,* पाठक पब्लिकेशन, इलाहाबाद।
4. श्रीवास्तव, प्रो0 हरीश चन्द्र, (1993), *तबला प्रकाश भाग–1,* संगीत सदन प्रकाशन, इलाहाबाद।

2.10 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. श्रीवास्तव, आचार्य गिरीश चन्द्र, (1994), *ताल प्रभाकर प्रश्नोत्तरी,* संगीत सदन प्रकाशन, इलाहाबाद।
2. कौर, डॉ0 भगवन्त, *परम्परागत हिन्दुस्तानी सैद्धान्तिक संगीत,* कनिष्का पब्लिशर्स, नई दिल्ली।

2.11 निबन्धात्मक प्रश्न

1. भातखण्डे तालिपि पद्धति का विस्तार पूर्वक वर्णन कीजिए।
2. तीनताल एवं चारताल का सम्पूर्ण परिचय देते हुए इनकी दुगुन एवं चौगुन की लयकारियाँ लिखिए।

इकाई 3 – गायन शैलियों(ध्रुवपद, धमार, ठुमरी, टप्पा, दादरा व होरी) का संक्षिप्त परिचय

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 गायन शैलियों का संक्षिप्त परिचय
3.3.1 ध्रुवपद
3.3.2 धमार
3.3.3 ठुमरी
3.3.4 टप्पा
3.3.5 दादरा
3.3.6 होरी
3.4 सारांश
3.5 शब्दावली
3.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
3.7 संदर्भ ग्रन्थ सूची
3.8 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
3.9 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0 संगीत के पाठ्यक्रम (बी0ए0एम0वी0–101) के तृतीय खण्ड की तीसरी इकाई है। इससे पहले की इकाईयों में आपने भातखण्डे स्वरलिपि तथा ताललिपि पद्धति के बारे में जाना। आप यह भी जान चुके होंगे कि राग की रचनाओं व तालों को भातखण्डे स्वरलिपि तथा ताललिपि पद्धति में कैसे लिपिबद्ध किया जाता है।

प्रस्तुत इकाई में आपको गायन शैलियों (ध्रुवपद, धमार, ठुमरी, टप्पा, दादरा व होरी) के बारे में बताया जाएगा। इन गायन शैलियों का भारतीय शास्त्रीय संगीत में क्या महत्व है तथा इनके इतिहास का वर्णन भी इस इकाई में किया गया है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप आप ध्रुवपद, धमार तथा अन्य गायन शैलियों के बारे में समझ पाऐंगे तथा इन शैलियों के गायन में क्या अन्तर है यह भी जान सकेंगे।

3.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप जान सकेंगे कि :–

- भारतीय शास्त्रीय संगीत में कौन–कौन सी गायन शैलियॉ प्रचलित थी और है।
- ध्रुवपद, धमार व अन्य गायन शैलियों में क्या समानताएं व अन्तर हैं।
- इन गायन शैलियों की क्या विशेषता है।
- ये गायन शैलियॉ किसके द्वारा प्रचारित–प्रसारित की गई।
- इन गायन शैलियों की वर्तमान में क्या स्थिति है।

3.3 गायन शैलियों का संक्षिप्त परिचय

गायन शैली – शास्त्रकारों ने संगीत को दो भागों में विभाजित किया है – **1.** मार्गी संगीत **2.** देशी संगीत। मोक्ष प्राप्ति के लिए गन्धर्व लोग जिस संगीत का प्रयोग करते थे उसे मार्गी संगीत कहते हैं। अब यह प्रयोग में नहीं है। किन्तु देशी संगीत जनता की रूचि पर निर्भर करता है। देशी संगीत का मुख्य उद्देश्य जनता का मनोरंजन करना है। देशी संगीत को गान भी कहते हैं। यह दो प्रकार का है।

1. निबद्ध गान **2.** अनिबद्ध गान

निबद्ध गान ताल के साथ गाया जाता है तथा बिना ताल के गाया जाने वाला गान अनिबद्ध गान कहलाता है। प्राचीन समय में अनिबद्ध गान के अन्तर्गत रागालाप, आलाप्तिगान, रूपकालाप, स्वस्थान नियम इत्यादि प्रचलित थे। आधुनिक समय में राग गायन से पहले जो आलाप राग प्रदर्शन के लिए किया जाता है वह 'अनिबद्ध गान' का प्रचलित प्रकार है। प्राचीन काल में निबद्ध के अन्तर्गत प्रबन्ध वस्तु, रूपक आदि गीतों के प्रकार प्रचलित थे। आधुनिक समय में निबद्ध गान के अन्तर्गत ध्रुवपद, धमार, ठुमरी, ख्याल इत्यादि प्रचलित हैं।

अतः गायन शैलियों का अर्थ आधुनिक समय में प्रचलित गीतों के प्रकारों से है। प्रत्येक प्रकार के गीतों को गाने का ढंग अलग–अलग है। इस प्रकार हम आधुनिक समय में गाने के ढंग को ही गायन शैली कहते हैं। जैसे – ध्रुवपद गायन शैली, धमार गायन शैली, ठुमरी गायन शैली इत्यादि।

अब आगे आपको गायन शैलियों – ध्रुवपद, धमार, ठुमरी, टप्पा, दादरा व होरी के बारे में बताया जाएगा।

3.3.1 ध्रुवपद – हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत की प्राचीनतम गायन शैली 'ध्रुवपद' है। यह गायन शैली मध्यकाल से आज तक प्रचलित है। शाब्दिक दृष्टि से ध्रुवपद(ध्रुव+पद) के दो शब्दों का अर्थ – ध्रुव – स्थिर होना, सदा एक स्थान पर रहना अथवा ज्यों का त्यों बना रहने वाला (अचल या अटल); पद – पैर, पंक्ति, चरण (किसी कविता या श्लोक का अर्थ)। ग्वालियर के राजा मानसिंह तोमर ने ध्रुवपद के प्रचार–प्रसार में बहुत योगदान दिया। इसका प्रचलन मध्य काल में अधिक था। शुरुआत में ध्रुवपद में संस्कृत के श्लोकों को गाकर ऋषि मुनि भगवान की अराधना करते थे। प्राचीन काल में ध्रुवपद गाने वालों को 'कलावन्त' कहा जाता था। अकबर के समय में तानसेन और उनके गुरू स्वामी हरिदास, डागुर, नायक बैजू और गोपाल आदि प्रख्यात गायक ध्रुवपद ही गाते थे। किन्तु आधुनिक काल में इसका स्थान ख्याल ने ले लिया है।

ध्रुवपद गम्भीर प्रकृति का गीत है। इसे गाने पर कंठ और फेफड़ों पर बल पड़ता है। इसलिए इसे मर्दाना गीत भी कहते हैं। अधिकांश ध्रुवपद के चार भाग होते हैं – स्थाई, अन्तरा, संचारी व आभोग। प्राचीन ध्रुवपदों के चारों भागों के 3–3 या 4–4 चरण होते थे। अब ज्यादातर ध्रुवपदों में दो ही भाग होते हैं – स्थाई व अन्तरा। इसके शब्द अधिकतर ब्रज भाषा के होते हैं। इसमें वीर, शांत और श्रृंगार रस की प्रधानता होती है। यह चारताल, ब्रहमताल, सूलताल, तीव्रा, रुद्रताल आदि पखावज की तालों में गाया जाता है। ध्रुवपद के साथ संगत के लिए पखावज का प्रयोग किया जाता है। किन्तु आजकल पखावज का प्रचार कम होने के कारण कुछ लोग तबले के साथ ही ध्रुवपद गा लेते हैं।

ध्रुवपद में सर्वप्रथम नोम–तोम का सविस्तार आलाप करते हैं। इस आलाप के भी चार भाग होते हैं। आलाप की लय अपने तीसरे अंग से धीरे–धीरे बढाई जाती है और इसी स्थान से गमक का प्रयोग प्रारम्भ होता है। ध्रुवपद में खटके अथवा तान के समान चपल स्वर समूह नहीं दिखाए जाते, बल्कि मींड़ और गमक का अधिक प्रयोग होता है।

आलाप के पश्चात् सर्वप्रथम पूरे ध्रुवपद को उसके चारों भाग सहित गाते हैं और फिर लयकारियां दिखाते हैं। ध्रुवपद में लयकारी को विशेष स्थान प्राप्त है। गीत की बंदिश के शब्दों द्वारा विभिन्न बोल बनाते हुए लयकारी का विस्तार करते हैं। ध्रुवपद की निम्न चार वाणियॉ मानी गई हैं :–

- शुद्ध वाणी/गोबरहार वाणी
- खंडहार वाणी
- डागुर वाणी
- नौहार वाणी

राग देशकार में एक ध्रुवपद उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत है।

राग देशकार – ध्रुवपद (चारताल)

आरोह – *सा रे ग प ध, सां*
अवरोह – *सां ध, प ग प ध, प ग रे सा*
पकड़ – *ध, प ग प ग रे सा*
स्थाई – *जागिए गोपाल लाल, प्रकट भयो अंशुमाल*
मिट्यो अंधकार उठो, जननी सुख पाई।
अन्तरा – *मुकुलित भए कमल जाल, कुमुद विद्रावन बेहाल*
त्रिविधि ताप मिट्यो जंजाल, तन न साई।।

चारताल

मात्रा – 12, विभाग – 6, ताली – 1, 5, 9 व 11 पर, खाली – 3 व 7 पर

1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12
धा	धा	दिं	ता	किट	धा	दिं	ता	तिट	कत	गदि	गन
×		0		2		0		3		4	

स्थाई

सा	ध	ध	ध	सां	ध	सां	–	सां	ध	–	प
जा	ऽ	गि	ये	ऽ	गो	पा	ऽ	ल	ला	ऽ	ल
0		3		4		×		0		2	
प	ग	प	प	प	ध	प	ग	प	ग	रे	सा
प्र	क	ट	भ	यो	ऽ	अं	ऽ	शु	मा	ऽ	ल
0		3		4		×		0		2	
सा	ध़	–	सा	–	रे	ग	प	प	ध	–	ध
मि	टयो	ऽ	अं	ऽ	ध	का	ऽ	र	उ	ऽ	ठो
0		3		4		×		0		2	
गं	रें	सां	–	सांप	ध	सां	ध	प	ग	रे	सा
ज	न	नी	ऽ	सुऽ	ख	पा	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ई
0		3		4		×		0		2	

अन्तरा

प	ग	प	प	ध	ध	सां	सां	सां	सां	–	सां
मु	कु	लि	त	भ	ये	क	म	ल	जा	ऽ	ल
×		0		2		0		3		4	
सां	सांध	सां	सां	सां	रें	सां	रें	सां	ध	–	प
कु	मुऽ	द	वि	द्रा	ऽ	व	न	वे	हा	ऽ	ल
×		0		2		0		3		4	
प	ध	ग	प	ध	ध	सां	रें	सां	ध	–	प
त्रि	वि	धि	ता	ऽ	प	मि	ट्यो	जं	जा	ऽ	ल
×		0		2		0		3		4	
ध	प	गप	ग	रे	सा	सा	ध	ध	ध	सां	ध
त	न	नऽ	सा	ऽ	ई	जा	ऽ	गि	ए	ऽ	गो
×		0		2		0		3		4	

3.3.2 धमार – धमार ताल में गाया जाने वाला गीत 'धमार' कहलाता है। इस गीत में अधिकतर होली सम्बन्धी शब्द होते हैं, अर्थात राधा–कृष्ण और कृष्ण–गोपियों की फाल्गुन मास की लीलाओं का वर्णन इन गीतों में होता है। धमार को ध्रुवपद अंग की शैली स्वीकार किया जाता है। इसको ध्रुवपद के समान, लयकारी प्रधान शैली में गाया जाता है किन्तु इसमें कभी–कभी बोल तानों का भी प्रयोग अनेक लयों के साथ होता है, जो ध्रुवपद में नहीं होता। प्रायः देखा जाता है कि धमार में ख्याल के समान तानें नहीं ली जाती हैं। इसकी गायन शैली ध्रुवपद के समान होने के कारण, ध्रुवपद गायक ही अधिकतर इसे गाते हैं। अन्तर केवल यह है कि ध्रुवपद, धमार से कुछ अधिक गम्भीर गायन शैली है। ध्रुवपद की तरह इस गीत की भाषा में भी ब्रज, हिन्दी व उर्दू भाषा के बोल होते हैं। इस गायन शैली में ध्रुवपद की तरह ही लयकारियों का चमत्कार सुनने को मिलता है। इस गीत में स्थायी और अन्तरा, दो भाग होते हैं। इस गायन शैली में अधिकतर *श्रृंगार–रस* की प्रधानता होती है।

राग कामोद – धमार (विलंबित–धमार ताल)

आरोह – *सा रे, प, म′ प, ध प, नि ध सां*

अवरोह – *सां नि ध प, म′ प ध प, ग म प, ग म रे सा*

पकड़ – *रे, प, म′ प ध प, ग म प, ग म रे सा*

स्थाई – *लाल मोरी चूनर भीजेगी।*

अन्तरा – *अबीर गुलाल मोपर जिन डारो जिन ही पे,*
डारो जेही रहत तोरे संग।।

धमार ताल

मात्रा – 14, विभाग – 4, ताली – 1, 6 व 11 पर, खाली – 8 पर

1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14
क	धि	ट	धि	ट	धा	ऽ	ग	ति	ट	ति	ट	ता	ऽ
×					2		0			3			

स्थाई

ग				म									
म	रे	सा	सा	रे	प	–	प	प	प	–	ध	–	प
ला	ल	मो	री	चू	ऽ	ऽ	न	र	भी	ऽ	जे	ऽ	गी।
3				×					2		0		

अन्तरा

								सां					
प	प	–	सां	सां	सां	–	सां	ध	–	सां	रें	सां	सां
अ	वी	ऽ	र	गु	ला	ऽ	ल	मो	ऽ	प	र	जि	न
×					2		0			3			
सं					प							सा	
ध	–	नि	प	–	गम	प	मग	म	रे	सा	–	ध़	प़
डा	ऽ	ऽ	रो	ऽ	जिन	न	हीऽ	ऽ	पे	डा	ऽ	रो	ऽ
×					2		0			3			
मं						ध	प			म			
प	ध	ध	मं	प	प	प	ग	म	प	म	रे	सा	सा
जे	ही	र	ह	त	तो	रे	सं	ऽ	ग	ला	ल	मो	री
×					2		0			3			

3.3.3 ठुमरी – ठुमरी शब्द में 'ठुम' और 'री' दो अंश हैं। ठुम ठमके का घोतक है और 'री' अंतरंग सखी से अपने अंतर मन की बात कहने का। यह गीत का वह प्रकार है जिसमें राग की शुद्धता की तुलना में भाव सौन्दर्य को अधिक महत्व दिया जाता है। इसकी प्रकृति ख्याल की तुलना में अधिक चपल होती है। ठुमरी गायकी को लखनऊ के अन्तिम नवाब वाजिद अली शाह के दरबार में पनाह मिली। स्वयं नवाब 'अख्तर पिया' उपनाम से ठुमरी गीत की रचना किया करते थे। इन्हें ही ठुमरी का आविष्कारक माना जाता है।

ठुमरी देश, तिलककामोद, भैरवी, पीलू, निलंग, झिंझोटी आदि रागों में गायी जाती है। इसके साथ पंजाबी, तीनताल, कहरवा, दीपचन्दी अथवा जतताल बजायी जाती हैं। ठुमरी में शब्द कम होते हैं। शब्दों के भावों को अनेक स्वर–समूहों द्वारा व्यक्त किया जाता है।

यह श्रृंगार रस प्रधान गीत है और इसमें मींड़–कण का विशेष प्रयोग होता है। स्थाई व अन्तरा में काम करने के बाद जब पुनः गीत की स्थाई में आते हैं तो कहरवा ताल बजाई जाती है। गायक और तबला वादक दोनों विभिन्न प्रकार के सुन्दर बोल बनाते हैं और कुछ देर के बाद पुनः पूर्व ठेके में आ जाते हैं।

ठुमरी उन व्यक्तियों के लिए उपयुक्त है जिनका कण्ठ मधुर और चपल होता है। बनारस, लखनऊ और पंजाब की ठुमरी विशेष रूप से प्रसिद्ध है। ठुमरी में सुन्दरता बढाने के लिए विभिन्न रागों की छाया दिखाते हैं।

ठुमरी – राग खमाज – जतताल (विलंबित)

आरोह – *सा, ग म, प, ध नि सां,*
अवरोह – *सां नि ध प, म ग, रे सा।*
पकड़ – *नि ध, म प, ध, म ग।*
स्थाई – *तुम राधे बनो हम श्याम बिहारी,*
मेरो नाम धरो नंद नंदन, तुम वृष भानु दुलारी।
अंतरा – *तुम पहिरो चूनर टीका मणि, मैं पीतांबर धारी,*
मैं मुरली कर मधुर बजाऊँ, तुम नाचो गिरिधारी।।

जत ताल

मात्रा – 16, विभाग – 4, ताली – 1, 5 व 13 पर, खाली – 9 पर

1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14	15	16
धा	ऽ	धिं	ऽ	धा	धा	तिं	ऽ	ता	ऽ	तिं	ऽ	धा	धा	धिं	ऽ
×				2				0				3			

स्थाई

														ग	म
														तु	म
						रे	सा								
प	नि	ध	प	म	ग	रेग	म	प	–	प	पध	मग	प	म	ग
रा	ऽ	धे	ब	नो	ऽ	ऽह	म	श्या	ऽ	म	बिऽ	हाऽ	ऽ	रो	ऽ
0				3				×				2			
ग	म	ध	नि	ध	–	ध	म	ध	–	ध	नि	धप	ध	प	प
मे	ऽ	रो	ऽ	ना	ऽ	म	घ	रो	ऽ	न	न्द	नऽ	ऽ	न्द	न
0				3				×				2			
ग	म	प	ध	प	ध	नि	सां	ध	सां	नि	ध	म	ग,	ग	म
तु	म	वृ	ष	भा	ऽ	नु	दु	ला	ऽ	री	ऽ	ऽ	ऽ	तु	म
0				3				×				2			

अन्तरा

ग	म	प	ध	नि	–	सां	–	नि	नि	सां	–	संनि	रें	सां	सां
रा	म	प	हि	रो	ऽ	चू	ऽ	न	र	टी	ऽ	काऽ	ऽ	म	णि
0				3				×				2			
प	–	नि	–	नि	–	सां	सां	धनि	सां	निध	पध	प	–	–	–
मै	ऽ	मु	र	तां	ऽ	ब	र	घाऽ	ऽ	ऽऽ	ऽऽ	री	ऽ	ऽ	ऽ
0				3				×				2			
ग	म	ध	ध	नि	धप	ध	प	ग	म	प	ध	मग	प	म	प
मै	ऽ	मु	र	ली	ऽऽ	ध	न	म	धु	र	ब	जाऽ	ऽ	ऊँ	ऽ
0				3				×				2			
ग	म	प	ध	प	ध	नि	सां	ध	सां	नि	धप	म	ग,	ग	म
तु	म	ना	ऽ	चो	ऽ	गि	रि	धा	रि	ऽ	ऽऽ	री	ऽ,	तु	म
0				3				×				2			
					रे	सा									
पध	नि	ध	प	म	ग	रेग	म								
राऽ	ऽ	धे	ब	नो	ऽ	ऽह	म								
0				3											

3.3.4 टप्पा – टप्पा गायन का प्रचार सर्वप्रथम गुलाम नवी शोरी ने किया था। इसलिए इन्हें टप्पा का आविष्कारक मानते हैं। टप्पा गायन शैली अन्य गायन शैलियों से बिल्कुल भिन्न होती है। इसमें गीत के शब्द बहुत कम होते हैं तथा स्थाई व अन्तरा ऐसे दो भाग होते हैं। इस गीत की रचना अधिकतर पंजाबी भाषा में होती है। टप्पा गायन की प्रकृति चंचल होती है और इसमें श्रृंगार रस प्रधान होता है। यह अधिकतर भैरवी, खमाज, झिंझोटी, पीलू आदि रागों में गायी जाती है।

इस गायन शैली में विशेष प्रकार की ताल का प्रयोग होता है जिसे टप्पा ताल कहते हैं। ख्याल की तरह इसमें खटके, मुर्की, मींड आदि का सुन्दर रूप देखने को मिलता है। परन्तु इसकी तानें ख्याल की तरह न होकर चपल तथा पेंचदार होती हैं। बहुत अभ्यास के बाद ही इस गायकी को अपनाया जा सकता है। इस गायकी का प्रचार पंजाब में अधिक है।

टप्पा ताल

मात्रा– 16, विभाग– 4, ताली – 1, 5 व 13 पर, खाली – 9 पर

1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14	15	16
धा	धिं	ऽता	धिं	धा	धिं	ऽता	धिं	ता	कत	ऽक	ऽत	ता	धिं	ऽता	धिं
×				2				0				3			

3.3.5 दादरा – दादरा गीत श्रृंगार रस प्रधान गीत है। इसकी प्रकृति प्रायः ठुमरी के समान होती है। अतः दादरा गायन शैली को अधिकतर ठुमरी अंग के रागों में गाया जाता है। दादरा, ठुमरी की अपेक्षा हल्की होती है। प्रायः ठुमरी गाने वाले गायक–गायिकाएं 'दादरा' गाते हैं। इसमें जन–मन–रंजन करने की पर्याप्त शक्ति होती है।

'दादरा' पूर्व उत्तर प्रदेश की विशेष गायन शैली है। यहॉ के गायक 'दादरा' गायन में दक्ष होते हैं। दादरा की भाषा पूर्वी हिन्दी की किसी न किसी बोली के अनुरूप होती है। जब कोठे पर गायन होता था उस समय बाइयां जो कोठे पर गाती थी वहॉ पर दादरा गायन का प्रचार–प्रसार अधिक हुआ। अब इस गायन शैली को प्रतिष्ठित गायक भी गाते हैं। यह शैली दादरा ताल में गायी जाती है। इसमें भी अन्य गायन शैलियों के समान स्थाई व अन्तरा दो भाग होते हैं।

खमाज – दादरा ताल(मध्य लय)

आरोह – *सा, ग म, प, ध नि सां*

अवरोह – *सां नि ध प, म ग, रे सा*

पकड़ – *नि ध, म प, ध, म ग*

स्थाई – *सुध न लीन्हीं ,जबसे गये नैनवा लगाय के,*
नैनवा लगाय मोरा जियरा हराय के।

अन्तरा – *तरफत हूँ रैन दिना, चैन नहि उन बिना,*
अजब पिया बैठ रहे सौतन घर जाय के।।

दादरा ताल

मात्रा – 6, विभाग – 2, ताली – 1 पर, खाली – 4 पर

1	2	3	4	5	6
धा	धी	ना	धा	ती	ना
×			0		

स्थाई

नि़			म			ग					
सा	सा	सा	ग	–	ग	म	–	म	प	प	ध
सु	धि	न	ली	ऽ	नि	ज	ऽ	ब्सें	ग	ए	ऽ
×			0			×			0		
ध						ध					
सां	–	नि	ध	–	म	प	ध	म	ग	–	–
नै	ऽ	न	वा	ऽ	ल	गा	ऽ	य	के	ऽ	ऽ
×			0			×			0		
सां											
नि	ऽ	नि	सां	–	नि	सां	–	सां	प	प	ध
नै	ऽ	न	वा	ऽ	ल	गा	ऽ	य	मे	री	ऽ
×			0			×			0		
पध	सां	नि	ध	–	म	गम	पध	म	ग	–	–
जीऽ	ऽ	या	रा	ऽ	ह	राऽ	ऽऽ	य	के	ऽ	ऽ
×			0			×			0		
ग											
म	सा	सा									
सु	धि	न									
×											

अन्तरा

ग			ध								
म	ग	म	नि	ध	नि	सा	–	नि	सां	सां	–
त	र	फ	त	हूँ	ऽ	रै	ऽ	न	दि	ना	ऽ
×			0			×			0		
						नि					
प	–	नि	नि	सां	–	सां	(सां)	–	नि	ध	–
चै	ऽ	न	न	हीं	ऽ	उ	न	ऽ	बि	ना	ऽ
×			0			×			0		
नि़			म			ग					
सा	सा	सा	ग	ग	–	म	–	म	प	प	ध
अ	ज	म	पि	या	ऽ	वै	ऽ	ठ	र	हे	ऽ
×			0			×			0		
ध						ध					
सं	–	नि	ध	ध	म	प	ध	म	ग	–	–
सौ	ऽ	त	न	घ	र	जा	ऽ	य	के	ऽ	ऽ
×			0			×			0		
ग	सा	सा									
सु	धि	न									
×											

3.3.6 होरी – संगीत तथा ललित कलाएं मनुष्य की भावनाओं को अभिव्यक्त करने का सशक्त माध्यम है। भारतीय समाज प्राचीन काल से उत्सवप्रिय रहा है। भारतीय संस्कृति में श्रृंगार और आनन्द, महोत्सव के रूप में बसन्त एवं होली क्रीड़ा का हमेशा से महत्व रहा है। प्राचीन ग्रन्थों में इसे मदनोत्सव या मदन महोत्सव भी कहा गया है। ऋतुराज के आगमन पर उसके मोहक वातावरण में स्वंय को सम्मलित करते हुए अपनी उमंगों को व्यक्त करने का त्योहार है होली। यह मूलतः ब्रज शैली का गायन है।

ख्याल गायक जब होली सम्बन्धी गीतों को विभिन्न तालों में गाते हैं तब यह गीत होली/होरी कहलाता हैं। कहने का अर्थ हैं कि राधा–कृष्ण और कृष्ण–गोपियों की फाल्गुन मास की लीलाओं के वर्णन को हम 'धमार ताल' में गाते हैं तब धमार कहलाता है तथा जब ख्याल गायक उसे त्रिताल, दीपचन्दी, कहरवा आदि तालों में गाते हैं, तब उसे होली/होरी कहते हैं।

धमार तथा होली में बहुत अन्तर है। इन दोनों की गायन शैलियॉ अलग–अलग हैं। होली में तान, आलाप, खटके, मुर्की आदि का प्रयोग ख्याल गायन की तरह होता है। इन गीतों को हम मौसमी गीत भी कह सकते हैं। होरी को अधिकतर फाल्गुन में तथा होली के अवसर पर ही गाया जाता है।

होरी–राग काफी – दीपचन्दी ताल(मध्य लय)

आरोह – *सा रे, ग, म, प, ध नि सां*
अवरोह – *सां नि ध, प, म ग रे, सा*
पकड़ – *सा सा, रे रे, ग ग , म म, प*
स्थाई – *ब्रज में हरि होरी मचायी, सखी री।*
अन्तरा – *इनसों निकली कुँवर राधिका उनसों कुवर कन्हाई,*
खेलत फाग परस्पर हिल मिल सो सुख बरनि न जाए से घर–घर
बजत बधाई।।

दीपचन्दी ताल

मात्रा – 14, विभाग – 4, ताली – 1,4 व 11 पर, खाली – 8 पर

1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14
धा	धिं	ऽ	धा	धा	तिं	ऽ	ता	तिं	ऽ	धा	धा	धि	ऽ
×			2				0			3			

स्थाई

						सा	म						
सा	सा	–	रे	–	रे	रे	ग	–	–	म	–	–	म
ब्र	ज	ऽ	में	ऽ	ह	रि	हो	ऽ	ऽ	री	ऽ	ऽ	म
×			2				0			3			
प	–	–	प	–	ध	प	म	ग	–	म	ग	(म)	–
च	ऽ	ऽ	ई	ऽ	ऽ	स	खी	ऽ	ऽ	री	ऽ	ऽ	ऽ
×			2				0			3			

अन्तरा

प	प	–	रें	–	–	–	रें	रें	–	गं	रें	गं	–
इ	त	ऽ	सों	ऽ	ऽ	ऽ	नि	क	ऽ	सी	ऽ	ऽ	ऽ
×			2				0			3			

										मं					
सं	रें	–	नि	–	नि	–	सां	सां	–	रें	–	गं	–
कुॅ	व	ऽ	रि	ऽ	रा	ऽ	ऽ	धि	ऽ	का	ऽ	ऽ	ऽ
×			2				0			3			
						ध							
सां	रें	–	सां	–	नि	–	ध	म	–	प	–	–	ध
ड	त	ऽ	सौं	ऽ	ऽ	ऽ	कुॅ	व	ऽ	र	ऽ	ऽ	क
×			2				0			3			
सां			ध										
नि	–	–	नि	–	रें	–	सां	–	–	–	–	–	–
न्हा	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ई	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ
×			2				0			3			
ग						रे							
म	–	–	ग	–	–	ग	म	–	–	प	–	–	प
खे	ऽ	ऽ	ल	ऽ	ऽ	त	फा	ऽ	ऽ	ग	ऽ	ऽ	प
×			2				0			3			
					ध								
सां	–	नि	ध	–	–	म	प	ध	–	(म)	–	ग	–
र	ऽ	ऽ	स्प	ऽ	ऽ	र	हि	ल	ऽ	मी	ऽ	ले	ऽ
×			2				0			3			
सां										सां			
नि	–	–	सां	–	नि	–	सां	सां	–	नि	–	सां	रें
सो	ऽ	ऽ	सु	ऽ	ख	ऽ	ब	र	ऽ	नी	ऽ	ऽ	न
×			2				0			3			
सां	नि	–	ध	–	–	प	ध	प	–	प	–	म	ग
ज	ऽ	ऽ	ई	ऽ	ऽ	सो	घ	र	ऽ	घ	ऽ	र	ऽ
×			2				0			3			
प							ध						
म	म	नि	ध	–	नि	ध	प	ध	प	म	ग	(म)	–
ब	ज	ऽ	त	ऽ	ऽ	ब	घा	ऽ	ऽ	ई	ऽ	ऽ	ऽ
×			2				0			3			
						सा							
स	सा	–	रे	–	रे	रे							
ब्रि	ज	ऽ	में	ऽ	ह	रि							
×			2										

अभ्यास प्रश्न

अ) रिक्त स्थानों की पूर्ति :

1. ध्रुवपद ———————— प्रकृति का गीत है।
2. प्राचीन काल में ध्रुवपद गाने वाले को ———————— कहते थे।
3. धमार गीत में अधिकतर———————————— शब्द होते हैं।
4. धमार गीत ———————— ताल के साथ गाया जाता है।
5. ठुमरी में राग शुद्धता की तुलना में ———————— को अधिक महत्व दिया जाता है।

ब) वस्तुनिष्ठ प्रश्न :

1. ध्रुवपद गायन शैली के प्रचारक थे :

क) सुल्तान हुसैन शर्की ख) राजा मानसिंह तोमर
ग) मुहम्मद शाह रंगीले घ) मियां शौरी

2.ठुमरी का आविष्कार किसने किया :

क) राजा मानसिंह तोमर ख) मियां शौरी
ग) नवाब वाजिद अली शाह घ) सुल्तान हुसैन शर्की

3.टप्पा के आविष्कारक थे :

क) मिया शौरी ख) नवाब वाजिद अली शाह
ग) सुल्तान हुसैन शर्की घ) राजा मानसिंह तोमर

4.दादरा गायन शैली मुख्यतः गायी जाती है :

क) पंजाब ख) बंगाल
ग) पूर्वी उत्तर प्रदेश घ) आसाम

5.टप्पा गायन शैली में ताल प्रयुक्त होती है :

क) कहरवा ख) दीपचन्दी
ग) टप्पा ताल घ) तीनताल

स) लघु उत्तरीय प्रश्न :

1. ध्रुवपद का संक्षिप्त परिचय दीजिए।
2. धमार व ठुमरी की दो–दो विशेषताएं लिखिए।
3. ध्रुवपद, धमार, ठुमरी, टप्पा, दादरा व होरी में कौन–कौन सी तालें बजाई जाती हैं।

3.4 सारांश

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप आधुनिक समय में प्रचलित गायन शैलियों के विषय में जान चुके होंगे। आपने जाना कि गायन की सभी विधाओं को गाने का अपना ढंग है। जिसे ही गायन शैली कहा जाता है। आप यह भी जान चुके होंगे कि गाने के ढंग अथवा शैली से ही एक गीत दूसरे गीत से अलग होता है। इन विधाओं में कुछ समानताएं होते हुए भी गीत के भाव, ताल, तथा प्रकृति के आधार पर एक दूसरे से भिन्न हो जाती है। जैसे ध्रुवपद तथा धमार दोनों के गायन का ढंग समान होते हुए भी गीत के भाव (जैसे ध्रुवपद में वीर रस प्रधान गीत तथा धमार में श्रंगार रस प्रधान), ताल (ध्रुवपद – चारताल, रूद्र, ब्रहा, सूलताल में तथा धमार केवल धमार ताल में) तथा प्रकृति (ध्रुवपद, धमार की अपेक्षा गम्भीर होता है) के आधार पर एक दूसरे से भिन्न होते हैं। उसी प्रकार ठुमरी, दादरा तथा होली तीनों विधाओं में भाव सौन्दर्य को अधिक महत्व दिया जाता है, किन्तु इनमें भी ताल, गीत के शब्द, भाव से जान सकते हैं कि कौन सी गायन शैली है। टप्पा सभी गायन विधाओं से अलग है, चपल व पेंचदार तानें तथा पंजाबी भाषा का मुख्यतः प्रयोग इस शैली की मुख्य विशेषता है। इस इकाई के अध्ययन के बाद आप विभिन्न गायन शैलियों को गाते वक्त इनकी सभी विशेषताओं को ध्यान में रखकर अपने कार्यक्रम को सफल बना सकेंगे।

3.5 शब्दावली

1.मार्गी संगीत	–	वेदकालीन प्राचीन शास्त्रीय संगीत।
2.देशी संगीत	–	वर्तमान का सामाजिक या शास्त्रीय संगीत।
3.गमक	–	जोरदार ध्वनि से स्वर पर आन्दोलन अथवा कम्पन करना।
4.खटका	–	द्रुत गति में मूल स्वर को स्पर्श करते हुए स्वर लगाना।
5.मींड़	–	एक स्वर से दूसरे स्वर तक धनुषाकृति की तरह सुरीले ढंग से बिना रूके जाना।

6.लयकारी – पूर्व निश्चित लय में अन्य प्रकार की लय दिखाना लयकारी कहलाती है।(जैसे एक मात्रा में दो संख्या बोलना–दुगुन की लयकारी)
7.मुर्की – वक्र स्वरों का द्रुत लय में लगाव।
8.जन–मन–रंजन– जनता का मनोरंजन।

3.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अ) रिक्त स्थानों की पूर्ति :
1) गम्भीर 2) कलावन्त 3) होली सम्बन्धी 4) धमार 5) भाव सौन्दर्य
ब) वस्तुनिष्ठ प्रश्न :
1.ख) राजा मानसिंह तोमर 2.ग) नवाब वाजिद अली शाह 3.क) मियां शौरी
4.ग) पूर्वी उत्तर प्रदेश 5.ग) टप्पा ताल

3.7 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. श्रीवास्तव, श्री हरीश चन्द्र, राग परिचय भाग 1 व 2, संगीत सदन प्रकाशन, इलाहाबाद।
2. द्विवेदी, डा0 रमाकान्त, संगीत स्वरित।
3. वसन्त, संगीत विशारद, संगीत कार्यालय, हाथरस।
4. भातखण्डे, पं0 विष्णुनारायण, क्रमिक पुस्तक मालिका (भाग 1,2,3,4), संगीत कार्यालय, हाथरस।
5. परांजपे, श्री एस0एस0, संगीत बोध।
6. गोवर्धन, श्रीमती शान्ति, संगीत शास्त्र दर्पण।
7. साभार गूगल।

3.8 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. *संगीत* मासिक पत्रिका, संगीत कार्यालय, हाथरस।
2. चौधरी, डा0 सुभाष रानी, *संगीत के प्रमुख शास्त्रीय सिद्धान्त,* कनिष्का पब्लिशर्स, नई दिल्ली।
3. बंसल, डॉ0 परमानन्द, *संगीत सागरिका,* प्रासंगिक पब्लिशर्स, नई दिल्ली।

3.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. ध्रुवपद व धमार के बारे में बताते हुए उनका अन्तर समझाइए।
2. निम्न में से किन्ही दो पर टिप्पणी लिखिए :
   टप्पा, ठुमरी, दादरा व होरी